हिन्दी काव्य-प्रबंध—माला-पुस्तक दूसरी।

॥ श्री ॥

हिन्दी-काव्यालङ्कार

जिसमें समस्त अलङ्कारों के लक्षण और उदाहरण अत्यन्त सुगम रीति से वर्णित हैं तथा न्याय और निज निर्मित अलङ्कार दर्पण भी सम्मिलित है।

—

—रचयिता—

साहित्याचार्य्य बाबु जगन्नाथप्रसाद भानु-कवि,

रिटायर्ड ई. प. सी. बिलासपुर, मध्यप्रदेश।

जगन्नाथ प्रेस बिलासपुर में मुद्रित।

सन् १९१८ ई०

[illegible]



PRINTED BY S ABDULLA MANAGER AT THE
"JAGANNATH PRESS"—BILASPUR, C P.
AND
PUBLISHED BY MR. B JAGANNATH PRASAD
PROPRIETOR



भूमिका।

हिन्दी-काव्य-प्रबन्ध-माला की यह दूसरी पुस्तक "हिन्दी-काव्यालंकार" अपने प्रिय पाठकों की सेवा में हम सादर समर्पण करते हैं। हिंदी-काव्य का रसास्वादन करने के लिये अलंकारों का जानना परमावश्यक है। मेरे पूर्व रचित ग्रंथ 'काव्य प्रभाकर' में भी इसकी सविस्तार व्याख्या है परन्तु उसका मूल्य अधिक होने के कारण वह सर्वसाधारण को दुष्प्राप्य सा है। इसलिये यह छोटीसी पुस्तक सर्वसाधारण के हेतु निर्मित की गई है। इसमें संदेह नहीं कि हिन्दी-साहित्य में इस विषय के अनेक ग्रंथ विद्यमान हैं परन्तु किसी में लक्षण और उदाहरण पृथक् २ छंदों में कहे हैं और किसी में लक्षण केवल गद्य में कहकर उदाहरण छंदों में कहे हैं जिनके याद करने में विद्यार्थियों को अत्यन्त कठिनाई होती है। भाषा भूषण में लक्षण और उदाहरण संक्षिप्त रीति से एक एकही दोहे में पाये जाते हैं परन्तु उनकी व्याख्या नहीं अतएव विद्यार्थियों को वे सुगम बोध नहीं हैं। इस पुस्तक में विशेषता यह है कि लक्षण और उदाहरण एकही दोहे में कहे गये हैं और उसी के नीचे आवश्यकीय व्याख्या भी सरल गद्य में लिखी गई है। इसके अतिरिक्त रामायणादि ग्रन्थों से अलंकारों के अनेक उदाहरण दे दिये गये हैं जिससे विषय भली भांति हृदयंगम हो जाय। [illegible] लिखे गये हैं। [illegible] है [illegible] की गई है। [illegible] है, जिससे [illegible] [illegible] [illegible]

गंगाधर तथा भाषा-ग्रंथ अलंकार प्रकाश, अलंकार मंजूषा, रामचंद्रभूषण, जसवंतभूषण और भाषाभूषण से बहुत कुछ सहायता ली गई है अत हम इनके लेखकों के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रदर्शित करते हैं । संस्कृत के तो प्राय सभी ग्रंथ उत्तम हैं पर भाषा में अलंकार प्रकाश और अलंकार मंजूषा ऊंचे दरजे के ग्रन्थ हैं । अस्तु इस पुस्तक से पाठकों को कुछ भी लाभ हुआ तो मैं अपने को कृतकृत्य समझूंगा ।

बिलासपुर, मध्यप्रदेश
१९१८

जगन्नाथ प्रसाद,
भानु-कवि ।

हिन्दी-काव्यालङ्कार का सूचीपत्र ।

सूचीपत्र ।





हिन्दी-काव्यालङ्कार

(Figure of Speech)

१. काव्य जिसमे अलकृत होता है उसे काव्यालङ्कार कहते हैं, काव्य दो प्रकार का है (१) गद्य (छंदरहित वाक्य) (२) पद्य (छंद निबद्ध) जिसमें गद्य वा पद्य दोनों हों उसको चंपू कहते हैं, यथा—

छंद निबद्ध सुपद्य कहि, गद्य होत बिन छंद।
चंपू गद्यऽरुपद्य मय, भानु भनत सानंद ॥

२. काव्य के दो भेद और हैं (१) दृश्य, जो देखने योग्य हो यथा नाटकादि (२) श्रव्य जो सुनने वा पढ़ने के योग्य हो अर्थात् लिपि बद्ध यथा रामायणादि।

३. काव्यान्तर्गत चमत्कार को अलङ्कार कहते हैं। अलङ्कार का धर्म है-काव्य की शोभा बढ़ाना।

४. अलङ्कार तीन प्रकार के होते हैं —

१ शब्दालंकार, जहाँ शब्द रचना के द्वारा चमत्कार भासित हो। यथा. रघुनंद आनँद कंद कोशल चंद दशरथ नंदनम्।

२ अर्थालंकार, जहाँ अर्थ मे चमत्कार पाया जावे। यथा. भ्रान्ति मे पावस रैन मे, धारा मेंह धार।

३ उभयालंकार, जहाँ एक से अधिक अलंकार हों चाहे फिर वे शब्द के हों या अर्थ के या दोनों के, यथा—

लसत मंजु मुनि मंडली, मध्य सीय रघुनंद।
ज्ञान सभा जनु तनु धरे, भक्ति सच्चिदानंद॥

सू०—अलंकार का विषय कहीं२ सूक्ष्म और वादग्रस्त है अतएव विद्यार्थियों को चाहिये कि यथा संभव परस्पर वादानुवाद द्वारा इसका अभ्यास सिद्ध करें।

शब्दालङ्कार

(A figure of Speech in words)

शब्दालंकार के आठ भेद हैं, १ पुनरुक्तवदाभास, २ अनुप्रास, ३ यमक, ४ वक्रोक्ति, ५ भाषासमक, ६ श्लेष, ७ प्रहेलिका और ८ चित्र।

१ पुनरुक्तवदाभास (पुन उक्तवत् आभास)

पुनरुक्ती वद भास, शब्द भिन्न एकार्थ जहं।
अर्थ जुदो परकास, भंग अभंगहिं रूपतें॥ यथा—

सह सारथि सूत सुलसत, तुरंग आदि पद सैन।
निकट तुम्हारे रहत नृप, सुमनस विबुध सुबैन॥

यहां प्रथमार्द्ध में सारथि और सूत ये दोनों भिन्न२ होने पर भी एकार्थवाची हैं परतु पद भग करने से अर्थ जुदा हो जाता है जैसे हे नृप सहसा (बलपूर्वक) रथि (योद्धागण) सूत (सारथी) तुरंग (घोडा) और पैदल फौज आदि से आप शोभायमान है। द्वितीयार्द्ध में अभंग पद सुमनस और विबुध भी एकार्थवाची है पर अर्थ जुदा है अर्थात् मंत्री और पंडित।

२ अनुप्रास
(Alliteration)

(वर्ण साम्य मनुप्रासो, वैषम्येऽपि स्वरस्य यत्)

व्यंजन सम अरु स्वर असम, अनुप्रास लंकार ।
छेक, वृत्ति, श्रुति, लाट अरु, अंत्य पांच विस्तार ॥

जहां व्यंजन की समानता हो, स्वर मिलें या न मिलें वही अनुप्रास है । अनुप्रास में स्वरों की गणना नहीं कीजाती ।

१ छेक-अनुप्रास
(Single Alliteration)

जहँ अनेक व्यंजनन की, आवृत्ति एकै बार ।
सो छेकानुप्रास ज्यों, अमल कमल कर धार ॥

छेक का अर्थ चतुर है-"छेको व्यञ्जन सङ्घस्य सकृत् साम्य मनेकधा । जहां अनेक व्यञ्जनों की केवल एक बार क्रमपूर्वक आवृत्ति हो उसको छेकानुप्रास कहते हैं । यहां कर धार में 'र' की और अमल कमल में 'मल' की एकही बार क्रमपूर्वक आवृत्ति है यदि एक स्थान में 'मल' हो और दूसरे स्थान में 'लम' हो तो क्रमपूर्वक नहीं समझना चाहिये जैसे 'रस' की आवृत्ति 'रस' न कि 'सर' । यथा—

(१) राधा के वर बैन सुनि, चीनी चकित सुभाय ।
दाख दुखी मिसरी मुरी, सुधा रही सकुचाय ॥

यहां वर और बैन में 'ब' की, चीनी और चकित में 'च' की, सुधा और सकुचाय में 'स' की एक एक बार आवृत्ति

है वैसेही दाख दुखी में 'द' और 'ख' की और मिसरी और मुरी में 'म' और 'र' की एक एक बार ही आवृत्ति है।

(२) शुभ शोभा सोहै सही, वारी वर चल चाल।
यहां शकार, भकार, सकार, हकार, वकार, रकार, चकार और ल कार का एक एक वार ही सादृश्य है।

(३) बाधे द्वार काकरी चतुर चित काकरी सो उमिर वृथा करी न राम की कथा करी।
यहां वृथा और कथा में 'थ' की, चतुर और चित में 'च' और 'त' की, करी करी में दोनों वर्णों की और काकरी-काकरी में तीनों वर्णों की आवृत्ति एक एक वार ही है।

(४) भंजेउ चाप दाप वड़ बाढ़ा (प और व)

(५) छेम करी कह छेम विसेखी (छेम, छेम, क, क)

(६) अति गह गहे बाजने बाजे (ग, ह, व, ज)

२ वृत्ति-अनुप्रास
(Harmonious Alliteration)

व्यजन इक वा अधिक की, आवृत्ति कैयो वार।
सो वृत्यानुप्रास जो, परै वृत्ति अनुसार॥

वृत्तिगत अनेक व्यंजनों का अथवा एक व्यजन का कई वार सादृश्य हो उसको वृत्त्यनुप्रास कहते हैं, इसमें क्रमाक्रम के विचार की आवश्यक्ता नहीं, यथा—

(१) कहि जय जय जय रघुकुल केतू।
(२) सत्य सनेह सील सुख सागर॥

वृत्ति के तीन भेद हैं (१) उपनागरिका (२) कोमला (३) परुषा।

१ उपनागरिका—जिसमें मधुर वर्ण तथा सानुनासिक की बाहुल्यता हो, परन्तु ट ठ ड ढ ण नहीं यथा-रघुनंद आनंद कंद कोशलचंद दशरथ नंदनम्। गुण-माधुर्य्य। अनुकूलरस शृंगार, हास्य, करुणा और शांत।

२ कोमला—जिसमें प्रायः उपनागरिका के ही वर्ण हों, परन्तु योजना सरल हो, सानुनासिक और संयुक्त वर्ण कम हों और अल्प समास वाले वा समास रहित ऐसे शब्द हों जो पढ़ते या सुनतेही समझ में आजावें यथा—सत्य सनेह सील सुखसागर। गुण प्रसाद। अनुकूलरस-सब रस।

३ परुषा—जिसमें कठोर वर्ण ट ठ ड ढ ण, द्वित्त वर्ण, रेफ, दीर्घ समास तथा संयुक्त वर्णों का बाहुल्य हो जैसे-वक्र वक्र करि पुच्छ करि रुष्ट ऋच्छ कपि गुच्छ। गुण—ओज। अनुकूलरस—वीर, वीभत्स, भय, अद्भुत और रौद्र।

उपनागरिका और कोमला की रीति को वैदर्भी, और परुषा की रीति को गौड़ी कहते हैं, वैदर्भी और गौड़ी के मिश्रण को पांचाली रीति कहते हैं यदि पांचाली में गूढ़ता कुछ कम हुई तो वह लाटी रीति कहाती है, यथा—

वैदर्भी सुंदर सरल, गौड़ी गुंठित गूढ़।
पांचाली जानौ जहां रचना गूढ़ अगूढ़॥

नाम	उदाहरण
१ सर्वान्त्य—	न ललचहु, सब तजहु, हरि भजहु यम करहु ।
२ समान्त्य- विषमान्त्य	जिहि सुमिरत सिधि होय, गणनायक करिवर वदन। करहु अनुग्रह सोय, बुद्धि राशि शुभगुण सदन।
३ समान्त्य—	सब तो । शरणा । गिरिजा । रमणा ।
४ विषमान्त्य—	लोभिहिं प्रिय जिमि दाम, कामिहि नारि पियारि जिमि तुलसी के मन राम, ऐसे हो कब लागिहौ ।
५ समविषमान्त्य-	जगो गुपाला । सुभोर काला । कहैं यशोदा । लहैं प्रमोदा ।
६ भिन्नतुकान्त—	कुंजों कुजों प्रति दिन जिन्हें, चाव से था चराया जो प्यारी थीं परम व्रज के, लाड़िले को सदाही। खिन्ना दीना विकल बन में, आज जो घूमती हैं। ऊधो कैसे हृदयधन को, हाय ! वे धेनु भूलीं ।

३ यमक ।

(Repetition of words in different meaning)

यमक शब्द को पुनि श्रवण, अर्थ जुदो होजाय ।
शीतल चंदन चंदनहिं, अधिक अग्नि तें ताय ॥

यहां चंदन शब्द दो बार आया है एक अर्थ चंदन दूसरे शब्द का सबर 'नहि' के साथ निषेधवाचक है, यमक में ड और ल, व और ब, तथा र और ल का भेद नहीं माना जाता है ।

(यमकादौ भवेदैक्यं, डलोर्बवोर्लरोस्तथा) यथा—
भजन कह्यो तातें भज्यो, भज्यो न एकहुं बार ।
दूर भजन जातें कह्यो, सो तू भज्यो गवार ॥

सू०—जहां आदर, आश्चर्य, शोक तथा दृढ़तार्थ वही शब्द कई वार आवे सो यमक नहीं। यथा—राम राम कहि राम कहि राम राम कहि राम, ऐसे प्रयोग को वीप्सा कहते हैं (वीप्साया द्विरुक्ति) इसमें विशेष चमत्कार प्रतीत नहीं होता, अनुप्रास भलेही मान लिया जाय।

४ वक्रोक्ति।

(Ambiguous utterance)

(वक्रोक्ती द्वैभांति की, एक श्लेष पुनि काकु)

वाक्य शब्द के सुनतही, अर्थ अनेक लखाहिं।
वहै श्लेष वक्रोक्ति है, भंग अभंग लखाहिं॥

१ भंग पद वक्रोक्ति

शब्द भंग करि अर्थ जहें, अन्य कछू होजाय।
श्लेष भंग पद ताहि को, कहत सुकवि समुदाय॥

१ गौरव शालिनी प्यारी हमारी, सदा तुमही इक इष्ट अहो।

(१) गौरव शालिनी (२) गौः + अवशा + आलिनी।
हो जगत मांहि गौ अवशा आलिनी हूं यहां भंग करि पढ़ो।

२ अजों तरयोना ही रहो, श्रुति सेवत इक अंग।
नाक वास वेसरि लह्यो, वसि मुकुतन के संग॥

तर्योना-कान का भूषण, तर्यो नाहीं-तरा नहीं, श्रुति कान, वेद। नाक नाक, स्वर्ग। मुकुतन-मोती, मुक्त पुरुष।

(इसमें अभंग पद भी जाने हैं)

२ अभंग पद वक्रोक्ति

शब्द भंग कीन्हें बिना, अर्थ विविध विधि होय।
तहं वक्रोक्ति श्लेष को, पद अभंग है सोय॥

कोतुम! हरिप्यारी! कहा, वानर को पुरकाम।
श्याम सलोनी! श्याम कपि, क्यों न डरैं तव वाम॥

हरि (कृष्ण और बंदर) श्याम (कृष्ण और काला)

काकु वक्रोक्ति

जहँ कंठ ध्वनि भिन्न से, आशय जुदो लखाय।
सो वक्रोक्ती काकु है, कविवर कहैं बुझाय॥

अलिकुल कोकिल कलित यह, ललित वसंत विहार।
कहु सखि! नहिं अइहैं कहा? प्यारे अबहुं अगार॥

क्या नहीं आवेंगे? ध्वनि अवश्य आवेंगे।

५ भाषा समक

(Mixed Language)

शब्दन की विधि एक जहँ, भाषा विविध प्रकार।
वाक्य मनोहर होयँ तहँ, भाषा समक विचार॥

दृष्टुं तत्र विचित्रता सुमनसा, मैं था गया बाग में।
काचित्तत्र कुरंगशाव नयना गुल तोड़ती थी खड़ी।
उन्मद्भ्रू धनुषा कटाक्ष विशिखैः, घायल किया था मुझे।
तत्सीदामि सदैव मोह जलधौ हैदर गुज़ारे शुकुर॥१॥

जादिनतें जमुनातट वाहि बजावत बासुरि नेक निहारो।
होशमरफ्त न मुदबदस्त भरोम रहै दिनरैन तिहारो।

हाफ़िज़ फ़िक्र कुदामनुमायम कोउ उपाय चलै न हमारो।
है सखि कोउ उपाय रचौ फिर बारिक देखिय नंददुलारो॥२॥

हर नयन हुताश ज्वालया जो जलाया,
रति नयन जलौघे खाक बाकी बहाया।
तदपि दहति चित्तं माक क्या मैं करोगी,
मदन सरसि भूयः क्या बला आग लागी॥३॥

यदा मुश्तरी कर्कटे वा कमाने, यदा चश्मखोरा जर्मींदाससमाने।
तदा ज्योतिषी क्या लिखेगा पढ़ेगा, हुआ बालका बादशाही करेगा॥४॥

मुश्तरी=बृहस्पति, कर्कटे (कर्क में) कमाने (धनु में) चश्मखोरा (शुक्र) जर्मींदाससमाने (दशमस्थान में)

६ श्लेष
(Paronomasia)

श्लेष शब्द पलटे बिना, औरहु अर्थ सुधार।
द्रोह करण काकोदर हु, रक्षा करण उदार

काकोदर (कालिनाग) की भी रक्षा करनेवाले उदार श्रीकृष्ण।
काकोदर (जयंत) की भी रक्षा करने वाले उदार राम॥

१ चाँदर पावर भार, आपन कलना आपना।
अंदर कदम कजनार, पीपम रजी गुन नग॥

२ हरा नाम जपि जे जपहिं, हरषि जनरघुनाह।
राघवगण रोपन फिरहिं, हारा राम रमाइ॥

हार+आगम-वियोग प्रिया दार को
हारा+आहार-हाय हाय बाग

७ प्रहेलिका

(Riddle)

प्रश्नहिं में उत्तर कढ़ै, कछू शब्द के फेर ।
सो प्रहेलिका दोय विधि, शब्द अर्थ गत हेर॥

(शब्दगत)

देखी एक अनोखी नारी, गुण उसमें इक सबसे भारी ।
पढ़ी नहीं यह अचरज आवे, मरना जीना तुरत बतावे॥ (नाड़ी)

हिंदी भाषा में ड़ के स्थान में र भी हो जाता है । यथा—अनाड़ी, अनारी ।

(अर्थगत)

लक्ष्मीपति के कर बसै पांच बरण के माहिं ।
पहिलो अक्षर छांड़ि के सो देते क्यों नाहिं ॥ (सुदरशन)

८ चित्र

(*Pictorial*)

चित्र वर्ण विन्यास है, पदमादिक आकार ।
गोरख धंधा समनिरस, त्यागत सुकवि विचार॥

(१) कमलबद्ध

नैन बान हन बैन मन, ध्यान लीन मन क्षीन ।
चैन हैन छिन रैन तन, छिन छिन उन बिन छीन॥

यहां ध्यान देने से विदित होगा कि इस दोहे का प्रत्येक दूसरा वर्ण नकार है । एक नकार को मध्य में रखकर, उसके चारों ओर गोलाकार अन्य वर्ण क्रमपूर्वक रखने से कमलाकार चित्र बन जाता है ।

(२) निरोष्ठ
(Non-labial)

छांड़ि पवर्गहि के वरण, और वरण सब लेत।
जगें न अधरा धर पढ़त, सो निरोष्ठ चित चेत॥

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

(३) अमत्त
(The Non-symbolic)

विन मात्रा वरणनि रचैं, ई ऊ ए कछु नाहिं।
ताहि अमत्त बखानिये, समुझौ निज मन माहिं॥

जग जगमगत भगत जन रस बस भव भय हर कर करन अनघ नर
फनफन बसन तन अगन अनल बढ़ पट दल दमन सजल धर धर कर
अजर अमर अज बरद चरन धर परम धरम गन सरन मरन पर
अमल कमल कर बदन सघन जस हरन मदन मद मदन दहन हर

(४) अन्तर्लापिका
(The Hidden Answer)

उत्तर आवे अंत में, प्रश्न नाहीं होय।
सोई अंतर्लापिका, हेतु छंद मह जोय॥

१ [illegible]
[illegible]

२ [illegible]

३ [illegible]
[illegible]

कौन चरित सुख देय कहा तें सरजू आई।
छद बद्ध को कियो राम जस भाषा गाई ॥
उत्तर-शंभु, प्रमाद, सुमति, हिय हुलसी।
राम चरित, मानस, कवि तुलसी ॥

(५) बहिर्लापिका
(The Hidden outside)

बाहर से उत्तर कढ़े, वाहिर्लापिका सोय।

१ भाषै काह सज्जन को कौन शंभु वाहन है का को सुख होत[1] काकी माला शिवधारी है।
काह गजे वधन छवी ले हग काकेअति कौन हर पुत्र सीप सुत को निखारो है ॥
शोभा को सु नाम का है कृष्ण नैंव धारो कहा सिंधु से मिलत कौन कोह अनियारो है।
उत्तर के वर्णन में आदि अंत छोड़ दीजे मध्य लीजे सोहिये मनोरथ हमारो है ॥

उत्तर-यार कृपा करि नेक निहारिय।

२ कह्यो नाम विपरीत करि, जामे भयो प्रसिद्ध ।
सो अनादि सम है गयो, जानि लेहु करि सिद्ध॥

उत्तर-उलटा नाम जपत जग जाना। वालमीक भे ब्रह्म समाना॥

(६) दृष्टिकूटक
(The Puzzler)

दृष्टि को कूटने वाला कूट क्लिष्टता का बोधक है तथापि अन्तर्लापिका और वहिर्लापिका के समान यह चित्रालङ्कार का एक भेद माना जा सक्ता है। यथा—

१ सयाने, २ वरु, ३ शुक्र, ४ कपाल, ५ साकर, ६ हरिणी, ७ गनेश, ८ मुक्ता, ९ पानिय, १० पहाड़, ११ सरिता, १२ नयन।

अहि षष्ठी रिपु की सुता, ताके पति को हार ।
ता अरि पति की भामिनी, सदा बसैं तुव द्वार ॥

अहि षष्ठी नागबेल, नागबेल का रिपु हिम (हिमांचल), हिमांचल की कन्या पार्वतीजी, पार्वती पति शिवजी, शिवजी का हार सर्प, सर्प के शत्रु गरुड़जी, गरुड़जी के पति विष्णु भगवान उनकी भामिनी जो लक्ष्मीजी हैं सो सदैव आप के द्वार पर निवास करें ।

मेष राशितें पांच लौं, गने कहे जो नाम ।
ता भक्षण द्वादश गये, आये नहिं घनश्याम ॥

मेष राशि से पांचवां सिंह, सिंह का भक्षण मास अर्थात् महीना, सो बारह महीने हो गये घनश्याम नहीं आये, समर्थ महात्मा सूरदासजी ही ऐसी कविता में बहुत कृत कार्य्य हुए हैं ।

(७) लोमविलोम

(The two faced in different sense)

सीधे उलटे बांचिये, और और अर्थ ।
एक छंद में सुकविजन, प्रगटहिं दोउ समर्थ ॥

लोम अनुलोम=यथा क्रम, विलोम=उलटा क्रम, यथा—

मनन माधर ज्यों सरके सप वेन गुडेम गुवेगुनी ।
नैन यशोलधिकी नरनी कवि धीर गवे निमि काल धमे ।
नैन गुनी जग धीर भरी धरि धीर धरी ललु दान वहै ।
मैन दनी गुरु चाल धर्म गुभ मो घन दे सारंगी बजमे ॥१॥
मैन यशी कम मे न वमो भगु ले धज नाक गुनी मन दे ।
हैं बन को गुनरी मर्यादि धरा भर भी गननी मुन मे ।
मैं धज बादिनि धेन रमी रिद्धेश नसी धिन की धन ने ।
धैन गुबे नुगुंन्गु दरे धन के नम ज्यो बपमानन मे ॥२॥

(८) गतागत

(The two faced conveying the same sense)

सूधो उलटो बांचिये, एकहिं अर्थ प्रमान ।
कहत गतागत ताहि कवि, केशवदास सुजान॥

यथा—मारु वनी वल केशवदास सदा वश केल वनी वलमा ।

(९) सिंहावलोकन

(Backward glance)

सिंहावलोकन का अर्थ सिंह समान आगे चलते हुए पीछे देखते जाना है, अर्थात् मुक्त पद को फिर ग्रहण करना। यथा

नामहिं के सुमिरें सुख पायहौ छाडि यहै न गिनौ जग कामहिं
कामहिं कोउ न आयहैं ये सुत मातु मातु पिता प्रिय बंधु औ वामहिं
वामहिं हो सिगरे भव के सुख होत नतौ छनहू त्रिसरामहिं
रामहिं राम ररौ रे ररौ सब वेद पुरान को है परिनामहिं



अर्थालङ्कार ।

(A figure of speech in sense)

व्यंगरु रस तें भिन्न जो, हृदय रूप सरसाहिं ।
चमत्कार भूषण सरिस, सोई भूषण आहिं ॥
यदपि सुजाति सुलच्छनी, सुबरण सरस सुवित्त ।
भूषण बिन न विराजई, कविता वनिता मित्त ॥

यह बात नहीं कि बिना अलङ्कार के कविता हो ही नहीं सकती अभिप्राय यह है कि कविता कैसीही उत्तम अच्छे वर्ण और रसयुक्त क्यों न हो परन्तु अलङ्कार हीन होने के कारण नम्र कहाती है अतएव अलङ्कार का ज्ञान परमावश्यक है काव्य में जो चमत्कार है उस चमत्कार को ही अलङ्कार कहते हैं जैसे कोई कहे कि "यह पुरुष बड़ा विद्वान है" तो इस वाक्य में कोई चमत्कार नहीं, यदि यही वाक्य इस प्रकार कहा जाय कि "यह पुरुष दूसरा बृहस्पति है" तो इस कथन में चमत्कार आगया। अलङ्कार काव्य के हृदय स्वरूप है। यथा—

छंद चरण भूषण हृदय, करमुख भावऽनुभाव ।
चख थाई श्रुति संचरी, त्याहित अंग सुभाव ॥

शब्दालङ्कार और अर्थालङ्कार में भेद यह है कि शब्दालङ्कार में उसी अर्थ के दूसरे शब्द रखने से वो अलङ्कारता नहीं रहती है। अर्थालङ्कार में उसी अर्थ के दूसरे शब्द रखने से अलङ्कारता नहीं जाती।

अलङ्कार में प्रधान चार बातों का जानना आवश्यक है अर्थात् १ उपमेय, २ उपमान, ३ वाचक और ४ धर्म।

जैसे-

जाकी तुलना कीजिये, सो उपमेय बखान (स्त्री का मुख)
जासों तुलना कीजिये, सो जानो उपमान (चन्द्रमा)
तुलना बोधक शब्द जो, वाचक कहिये ताहि (सदृश)
गुण उपमे उपमान को, गहन धर्म स्वइ आहि (उज्ज्वल)

उपमेय वह है जिसकी तुलना किसी दूसरे वस्तु से की जावे, जैसे मुख, पद, अधर आदि। उपमेय को वर्ण्य, वर्णनीय, विषय, प्रस्तुत, वा प्रकृत भी कहते हैं।

उपमान वह है जिससे तुलना की जावे अर्थात् जिसकी उपमा दीजावे, जैसे चन्द्र, कमल आदि। उपमान को अवर्ण्य, अवर्णनीय, विषयी, अप्रस्तुत वा अप्रकृत भी कहते हैं।

वाचक वह शब्द है जिससे तुलना का बोध हो जैसे, से, सो, सरिस, समान, इव इत्यादि। कविजनों के मत में जहां-इव, यथा, ज्यों, जैसे, सी, से, सो, लौं इत्यादि उपमावाचक शब्द कहे गये हों उसको श्रौती वा शाब्दी उपमा कहते हैं और जहा-तुल्य, तून, सम, समान, सरिस, सदृश, वत् इत्यादि उपमा-वाचक शब्द कहे गये हों उसको आर्थी उपमा कहते हैं।

धर्म वह है जिसमें उपमेय और उपमान का साधारण धर्म प्रगट हो, जैसे उज्ज्वलता, मृदुता, कठोरता इत्यादि।

१ पूर्णोपमा

(Complete Simile)

पूर्णोपम वाचक धरम, उपमे अरु उपमान।
ससि सो उज्ज्वल तिय वदन, पल्लव से मृदु पान॥

पूर्ण+उपमा=पूर्णी उपमा, उप=समीप, मा=नापना, समीपता से विशेष ज्ञान । जिसमें भेद रहते हुए भी समान धर्म कहा जाय सो उपमा है । पूर्णोपमा में उपमेय, उपमान, वाचक और धर्म चारों रहते हैं । ससि सो उज्ज्वल तिय वदन को गद्य में इस प्रकार कह सकते हैं स्त्री का मुख कैसा उज्ज्वल है जैसा चन्द्र वैसेही पल्लव से मृदु पान को इस प्रकार कह सकते हैं हस्त कैसे कोमल हैं जैसे पल्लव । यथा—

करि कर सरिस सुभग भुज दंडा ।

जहां उपमेय, उपमान, वाचक और धर्म इनमें से एक दो वा तीन का लोप हो उसे लुप्तोपमा जानो, यथा—

(१) लुप्तोपमा

(Elliptical Simile)

लुप्तोपम है अंग जहँ, न्यून चारतें देख ।
बिजुरीसी पंकज मुखी, कनकलता तिय लेख॥

यहां बिजुरीसी पंकज मुखी धर्म लुप्तोपमा और कनकलता तिय लेख, वाचक धर्म लुप्तोपमा है, उपमा के और भी भेद है ।

(२) मालोपमा

(Garland of Similes)

मालोपम उपमेय की, उपमा बहुत प्रकार ।
अलि से मानस रैन से, बाला तेरे बार ॥

माला पंक्ति को कहते हैं । यथा—

जहाँ सकल जन प्रेम मगीणा । महल वदन गर्व गर होना ॥
पूर्ण मनहीं दृपुराज मनाना । पर कर सुने महम दम काना ॥
बहुरि नाक सब बिनवहिं नहीं । मंगर सुरलोक हिम नहीं ॥

सुरानीक=देवताओं की फौज जिससे राज्यमद सूचित होता है । सुरा=मद, शराब । यथा—

बाज ज्यों विहंग पर सिंह ज्यों मतंग पर त्यों विपच्छ बंस पर शेर सिवराज है ।

(३) रशनोपमा
(Girdle of Similes)

रशनोपम उपमेय जहँ, होत जात उपमान ।
कुलसी मति मति सेजु मन, मनहीं सो गुरुदान॥

रशना=करधनी वा शृंखला । यथा—

काव्यवर जग सोहै कैसो सोहै काव्यवर जैसो मानसर सोहै सरन को अधिराज । कैसो सोहै मानसर कहौं कवि भानु मोसों जैसो सोहै द्विजराज कैसो सोहै द्विजराज । मदन मुकुर जैसो मदन मुकुर कैसो प्यारी के वदन पर जैसी रही छबिछाज । प्यारी को वदन कैसो सुख को सदन जैसो सुख को सदन कैसो जैसो शुभ रामराज ।

२ अनन्वय
(Comparison Absolute)

जाकी उपमा ताहि सों, दिये अनन्वय मान ।
तेरे मुख की जोड को, तेरो ही मुख जान ।

अन्+अन्वय=नहीं है सम्बंध जिसका, यथा—१ इन सम ये उपमा उर आनी, २ तू सो तुही दशरत्थ दुलारे, ३ सुन्दर नंद किशोर से सुन्दर नंद किशोर ।

३ उपमानोपमेय

(Reciprocal comparison)

सो उपमानुपमेय, उपमा लागे परस्पर।
तुव दृग खंजनसेय, खंजन हैं तुव नैन से॥ यथा—

१ वे तुम सम तुम उन सम स्वामी।
२ राम कथा मुनिवर्य बखानी, सुनी महेश परम सुख मानी।
३ ऋषि पूछी हरि भगति सुहाई, कही शम्भु अधिकारी पाई।
४ औधपुरी अमरावतिसी अमरावति औधपुरीसी विराजै।

इसको उपमेयोपमा भी कहते हैं।

४ प्रतीप

(Converse)

(१) सो प्रतीप उपमेय सम, जब कहिये उपमान।
लोचन से अंबुज बने, मुख सो चंद बखान॥

प्रतीप=प्रतिकूल, उलटा। यहां उपमानही उपमेय सा वर्णित है। यथा—

डारि नहांय अगुरु जल, सो सागर सम स्याम।

(२) उपमे को उपमान तें, आदर जबै न होय।
गर्व करत मुख को कहा, चंदहि नीके जोय॥

यहां उपमेय का अनादर है।

का घूंघट मुख मूंदहु अबला नारि।
चांद सरग पर सोहत यहि अनुहारि॥

(३) जहँ बरणत उपमेय तें, हीनो करि उपमान।
तीछन नैन कटाच्छ तें, मंद काम के बान॥

यहां उपमान का अनादर है।

१ सिय मुख समता पाव किमि, चंद्र बापुरो रंक।
२ कुलिशहु चाहि कठोरता, कोमल कुसुमहु चाहि।
चित खगेस रघुनाथ कर, बूझ परै कहु काहि॥
३ देखो नँद नंद सुखकंद ब्रजचंद आजु राधे मुखचन्द चंद मंद करि डारो है॥

(४) उपमे की उपमान जब, समता लायक नाहिं।
अति उत्तम दृग मीन से, कहे कौन विधि जाहिं॥

यहां उपमान की योग्यता माननीय नहीं। यथा—
सीय बदन सम हिम कर नाहीं।

(५) व्यर्थ होय उपमान जब, उपमे को लखि सार।
दृग आगे मृग कछु न ये, पंच प्रतीप प्रकार॥

यहां उपमान बिलकुल अयोग्य ठहरा गया। यथा—
कोटि काम उपमा लघु सोऊ।

५ रूपक
(Metaphor)

रूपक साम्य निषेध बिन, जहँ उपमे उपमान।
मिलि तद्रूप अभेद ह्वै, अधिक न्यून सम जान॥

रूपक=किसी के सदृश रूप का धारण करनेवाला चाहे स्वरूप से वा गुण से, मनोहर आकृति और स्वभाव जैसे—हस्तकमल, मुखकमल, नेत्रकमल, मुखचन्द्र इत्यादि।

तद्रूप अधिक

१ मुख शशि वा शशितें अधिक, उदित ज्योति दिन रात।

२ विष वारुणी बंधु प्रिय जेही, कहिय रमा सम किमि बैदेही॥

तद्रूप न्यून

१ सागर तें उपजी न यह, कमला अपर सुहात।

२ राम मात्र लघु नाम हमारा।

३ दुइ भुज के हरि रघुवर सुंदर बेस, एक जीभ के लछिमन दूसर सेस।

तद्रूप सम

१ नैन कमल ये ऐन हैं, और कमल किहि काम।

२ लखन उतर आहुति सरिस, भृगुपति कोप कृशानु।

अभेद अधिक

१ गमन करत नीकी लगत, कनकलता यह बाम।

२ गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन।

३ हरिहर यथा विराजत बेनी, सुनत सकल मुद मंगल देनी।

अभेद न्यून

१ हे राधे तू उर बसी, धरे मानुषी देह।

२ अति खल जे विषयी बक कागा।

३ सब के देखत लोक पथ, गयो सिंधु के पार।
पविरहित बिन पक्ष को, बीर समीर कुमार॥

अभेद सम

राम कथा सुंदर करतारी, संशय बिहग उड़ावनहारी।

सू०—जहां उपमेय को उपमान मानकर फिर उसकी तुलना उपमान से करें सो तद्रूपक है और जहां उपमेय ही को उपमान मानकर फिर उसकी तुलना उपमान से न की जावे सो अभेद रूपक है।

६ परिणाम
(Commutation)

उपमे की किरिया करै, उपमा सो परिणाम ।
लोचन कंज बिशाल तें, देखत देख्यो बाम ॥

परिणाम=स्वभाव का बदलना । यथा—

१ कर कमलन धनु सायक फेरत ।
२ मामवलोकय पंकज लोचन ।
३ है घनश्याम पै तेरो पपीहरा है ब्रजचंद पै तेरो चकोर है

७ उल्लेख
(Representation)

(१) सो उल्लेख जु एक को, बहु समझैं बहु रीति ।
जाचक सुरतरु, तिय मदन, अरि को काल प्रतीत ।

उद्+लेख=उत्कृष्टलेख, जहां एक को अनेक जन अनेक प्रकार से समझें ।

देखहिं भूप महा रणधीरा । मनहुं वीर रस धरे सरीरा ॥
रहे असुर छल जो नृप भेखा । तिन प्रभु प्रगट काल सम देखा ॥

(२) बहु विधि बहु गुण एक के, बरणे द्वितीय उलेख ।
तू रण अर्जुन, तेज रवि, सुर गुरु बचन विशेख ॥

जहां एक को एक जन अनेक प्रकार से वर्णन करे सो दूसरा भेद है, जैसे तू रण में अर्जुन, तेज में सूर्य और बचनों में बृहस्पति है । यथा—

सब गुण भरा ठकुरवा मोर, अपनै पहरू अपनै चोर ।

८ स्मरण
(Rhetorical Recollection)

सुमिरन लखि सुनि काहु को, सुधि आवे जहँ खास ।
सुधि आवत वा बदन की, देखे सुधा निवास ॥

स्मरण सुनने देखने सोचने तथा स्वप्न सेभी हो सकता है।

१ प्राची दिशि शशि उग्यो सुहावा ।
सिय मुख सरिस देखि सुख पावा ॥

२ सघन कुंज छाया सुखद, शीतल मंद समीर ।
मन ह्वै जात अजौं वहै, वा जमुना के तीर ॥

९ भ्रांति
(Mistake)

भ्रांति और को औरही, निश्चय जब अनुमान ।
तुव सँग फिरत चकोर है, बदन सुधानिधि जान॥यथा-

१ कपि करि हृदय विचार, दीन मुद्रिका डारि तब ।
जानि अशोक अँगार, सीय हर्षि उठि कर गहेउ॥

२ पाँय महावर देन को, नाइन बैठी आय ।
फिरि फिरि जानि महावरी, एड़ी मीड़त जाय ॥

सू०—उन्माद (पागलपने से या चित्त ठिकाने न रहने) से जो भ्रांति होती है उसमें चमत्कार नहीं ।

१० संदेह
(Doubt)

अलंकार संदेह में, कि धौं यहै कै आन ।
बदन किधौं यह शीतकर, ठीक परत नहिं जान ॥

१ यह मानस मणि होइ कि नाहीं ।
२ की तुम तीनि देव महँ कोऊ ।

११ शुद्धापह्नुति

(Concealment pure)

शुद्धापह्नुति झूंठ लहि, सांची बात दुराहिं।
नेन नहीं ये मीन जुग, छवि सागर के माहिं॥

शुद्ध=स्वच्छ, अपह्नुति=छिपाना।

१ यह मुख नहीं चद्रमा है।

२ बंधु न होय मोर यह काला।

अपह्नुति के भेद नीचे लिखे हैं।

कैतवापह्नुति

(Concealment of the deceitful)

कैतव पह्नुति एक को, मिस करि वरणत आन।
तीछन नैन कटाच्छ मिस, बरसत मन्मथ बान॥

कैतव=छल, व्याज, मिस। इस अलङ्कार का वाचक "मिस" है।

१ लखी नरेस बात सब साची। तिय मिस मीच सीस पर नाची॥
२ पठै मोह मिस खगपति तोही। रघुपति दीन बडाई मोही॥

हेत्वपह्नुति

(Concealment with a reason)

वस्तु दुराइये युक्ति सों, हेतु अपह्नुति सोय।
तीव्र चंद्र नहिं निशि रवी, वड़वानलही जोय॥

चंद्र को देखकर कहती है, तीव्र है अतएव चद्र नहीं, रात्रि है अतएव सूर्य नहीं—यह तो वडवानल ही है। यथा—

प्रभु प्रताप वड़वानल भारी। शोषेउ प्रथम पयोनिधि वारी॥
तव रिपु नारि रुदन जलधारा। भरेउ वहोरि भयउ तिहि खारा॥

पर्य्यस्तापह्नुति

(Concealment transferred)

पर्य्यस्तापह्नुति धरम, आन वस्तु में रोप ।
है न सुधाधर की जु यह, वदन सुधाधर ओप॥

पर्य्यस्त=फेंका हुआ । यथा—

१ मुकुट न होहिं भूप गुण चारी ।
२ है न सुरा यह है सुधा-संगति साधु सुजान ।
३ कालकूट विष नाहिं, विष है केवल इंदिरा ।
हर जागत छकि चाहि, होहि सँग हरि नींद न तजत ॥

भ्रांत्यपह्नुति

(Concealment under a mistake)

भ्रांति अपह्नुति सत्त कहे, पृच्छक को भ्रम जाय ।
ताप कंप ज्वर है सखी !, ना सखि मदन सताय॥

कह प्रभु हँसि जनि हृदय डराहू । लूक न असनि न केतु न राहू॥
ये किरीट दसकंधर केरे । आवत बालि तनय के प्रेरे ।

सू०—इसको भ्रांतापह्नुति भी कहते हैं ।

छेकापह्नुति

(Concealment of the artful)

छेक अपह्नुति युक्ति करि, पर सों बात दुराय ।
करत अधर क्षत पिय! नहीं, सखी सीत ऋतु बाय॥ यथा

पाहु न थोरिहिं सँग सुनाईं । दीन्ह मनाय कुरंगिनि नाईं ॥

सू०—मुकरी (कहमुकरी) इसी के अंतर्गत है ।

१ सब निसा वह आवै पास । सुंदरता मानो छवि वास ॥
निरमली दर दसौ दरद । ऐ सखि साजन ! ना सखि चंद ॥

फलोत्प्रेक्षा-सिद्धास्पदा

कैकइ कटु बोलत मनौ, लौन जरे पर देय ।

यहां पर जले पर निमक छिड़कने की वेदना कटु बोल का फल नहीं तथापि तद्वत् फल की कल्पना की गई, कटु बोल सिद्ध ही है ।

फलोत्प्रेक्षा-असिद्धपदा

तुव पद समता को कमल, इक पादहिं जल सेय।

कमल स्वतः जल में रहता है चरणों की समतारूपी फल की प्राप्ति के लिये नहीं तथापि फल कल्पित किया गया। जड़ कमल में जल सेवन करना असिद्ध है अतएव असिद्धास्पदा। इसी को चेतन धर्मोत्प्रेक्षा (Personification) भी कहते हैं, मनु जनु नहीं कहा अतएव गम्योत्प्रेक्षा भी है ।

सू०-उत्प्रेक्षा में "यथा" वा "ज्यों" शब्द का कथन दोष है इसमें "मनु जनु" का प्रयोग समुचित है यदि पद में क्रिया किसी हेतु से कही गई हो तो हेतूत्प्रेक्षा और उस से किसी फल की इच्छा प्रगट हो तो फलोत्प्रेक्षा जानो। उत्प्रेक्षा की समर्थन को अर्थान्तरन्यास का कथन अनुचितार्थ दोष है जैसे-इच्छत हिमगिरि तमहिं मनु गुफा लीन रवि भीत, शरणागत छोटेहु पर करत बड़े जन प्रीत । यहां अचेतन तम को सूर्य से भय होनाही संभव नहीं फिर हिमालय द्वारा यह केवल व्यर्थ संभावना है इस के समर्थन के लिये उत्तरार्द्ध में अर्थान्तरन्यास का कथन व्यर्थ है ।

१३ अतिशयोक्ति

(Hyperbole)

अतिशयोक्ति भूषण तहां, जहँ केवल उपमान ।
कनकलता पर चंद्रमा, धरे धनुष है बान ॥

जहां केवल उपमानही कथन होता है वहां अतिशयोक्ति जानो जैसे यहां कनकलता से सुंदर स्त्री, चंद्रमा से मुख, धनुष से भौंह और बाणों से नयनों का बोध होता है। इसी को रूपकातिशयोक्ति भी कहते हैं, यथा—

१ अरुण पराग जलज भरि नीके, ससिहि भूष अहि लोभ अमीके।
यहां कर नहीं कहा जलज कहा, मुख नहीं कहा शशि कहा।

२ आज किधर चांद निकला.

सापह्नवातिशयोक्ति

(H-Concealed)

सापह्नवपह्नुति सहित, रूपकशयोक्ति बखान ।
अहि शशि मंडल पै लसै, जिय पताल जिन जान ॥

यहां मुख रूप चंद्रमा के ऊपर वेणी रूप अहि (सर्प) का जो वर्णन है सोई अतिशयोक्ति है और अहि का निवास पाताल में है उसे यहां [illegible] से पर आगे यह अलङ्कार है, यथा-

१ [illegible] निवन में सुधा, [illegible]।

२ [illegible] होता है।

१ कह कपि प्रथम दक्षिणा लेहू । पाछे हमहिं मंत्र तुम देहू ॥
२ पद पखारि जलपान करि, आप सहित परिवार ।
पितर पार करि प्रभुहिं पुनि, मुदित गयो लै पार ॥

१४ तुल्ययोगिता

(Equal Pairing)

(१) तुल्य धर्म वर्ण्यैं वरण, वा अवर्ण्य इक संग ।
बैन नैन बांके भये, प्रगटत यौवन अंग ॥

जहा अनेक उपमेयों का वा अनेक उपमानों का क्रिया वा गुण कर के एकही धर्म संबंध कथन किया जाय वहां तुल्य योगिता जानो यहा बैन नैन (वर्ण्य) का एक ही धर्म बांके होना कहा गया, यथा--

वर्ण्य वर्ण्य

१ बैन नैन बाके भये, प्रगटत यौवन अंग ।
२ गुरु रघुपति सब मुनि मन माहीं। मुदित भये पुनि पुनि पुलकाहीं।
३ श्रीदशरत्थ सों मागिबे हेतु गुनी निगुनी द्वउ द्वार पै डोलै ।
४ चरण धरत चिंता करत, तनिक न भावै सोर ।
सुवरण को ढूंढत फिरत, कवि कामी अरु चोर ॥

अवर्ण्य अवर्ण्य

१ लखि कोमलता अंग तुव, हे कामिनि बिन खोर ।
को न गुलाबरु मालती, कदली गुनत कठोर ॥
२ कमल कोक मधु कर खग नाना । हरषे सकल निसा अवसाना ॥
३ अरुणोदय सकुचे कुमुद, उडगन ज्योति मलीन ॥

इस आधे दोहे के उदाहरण में हेतु अलंकार का भी आभास है अतएव उभयालकार है यदि पूरा दोहा कहें (तिमि तुम्हार आगमन सुनि भये नृपति बल हीन) तो वर्ण्य अवर्ण्य के संबध से दीपकालकार होगा.

(२) शत्रु मित्र पै एक सम, जहां होत व्यवहार।

१ गुण निधि नीके देत तू, तिय को अरि को हार॥ यथा–
२ कोऊ काटौ क्रोध करि, वा सींचौ करि नेह।
   देत पेड़ मधूर के, तऊ दुहुन को देह॥
३ यहाँ संत समान चित, हित अनहित नहिं कोय।
   अञ्जुलि गत शुभ सुमन जिमि, सम सुगंध कर दोय॥
४ जे निसिदिन सेवा करैं, अरु जे करैं विरोध।
   तिन्है परम पद देत हरि, कहो कौन यह बोध॥
५ कीरति भणित भूति भल सोई।
   सुरसरि सम सब कर हित होई॥

(३) गुणगण बहु के तुल्य करि, एकहि ठौर बखान।

१ लोकपाल सुरपति वरुण, यम कुबेर नृप जान॥ यथा—
२ प्रभु समर्थ सर्वज्ञ शिव, सकल कला गुण धाम।
   जोग ज्ञान वैराग्य निधि, प्रणत कल्प तरु नाम॥
३ तुम पितु मातु बंधु प्रिय मोरे।

उदाहरण नं० ३ यदि विधिपूर्वक कथन किया जाय तो उल्लेख होगा।

सू०—मालदीपक और दीपक तुल्य धर्म के योग से [illegible] नहीं, [illegible] अथवा जहाँ तुल्य धर्म के योग से [illegible] हो तुल्ययोगिता है यहाँ योग का अर्थ [illegible] [illegible] नहीं [illegible] होता है [illegible] [illegible] [illegible]

१५ दीपक
(Illuminator)

दीपक वर्ण्य अवर्ण्य को, एकै धर्म समान।
गृह गढ़ गिरि अरुगुणिन को, होय उच्चतामान॥

दीपक में प्रस्तुत (वर्ण्य) और अप्रस्तुत (अवर्ण्य) अर्थात् उभयपक्ष का धर्म एक बारही कथन किया जाता है सो यह अलकार वहीं होगा जहां दीपन का कथन चमत्कारी हो यहां गृह, गढ, गिरि अवर्ण्य, गुणिन वर्ण्य, उच्चता धर्म, ५

१ सोहत है मद सों कलभ अति प्रताप सों भूप।
भूप (वर्ण्य) हाथी (अवर्ण्य) सोहत (धर्म)

२ सोहत भूपति दान सों, फल फूलन आराम।
भूपति (वर्ण्य) आराम=बाग (अवर्ण्य) सोहत (धर्म)

३ सँग तें जती कुमन्त्र तें राजा। मान तें ज्ञान पान तें लाजा
प्रीति प्रणय बिनु मद तें गुनी। नाशहिं वेगि नीति अस सुनी।
राजा (वर्ण्य) अन्य (अवर्ण्य) नाशहिं (धर्म)

४ राम नाम मणि दीप धरु, जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहिरहुं, जो चाहसि उजियार॥
जीभ (वर्ण्य) देहरी (अवर्ण्य) उजियार (धर्म)

५ अगुन सगुन बिच नाम सुसाखी। उभय प्रबोधक चतुर दुभाखी
सगुण (वर्ण्य) अगुण (अवर्ण्य) प्रबोध होना (धर्म)

नीचे दो उदाहरण हम देते हैं जिनमें जिसे प्रस्तुत [illegible] सो वर्ण्य और शेष अवर्ण्य हैं, यथा—

६ दृग अंजन, मुख पान तें, मिहँदी तें कर जान।
जावक तें तिय चरण की, शोभा अधिक बखान॥

७ लोभी जन धन लाभ अरु, तिय जन संग सकाम।
साधु सकल श्रीराम के, नाम लहत आराम॥

सू०—तुल्य योगिता में केवल वर्ण्य का वर्ण्य के साथ वा अवर्ण्य का अवर्ण्य के साथ सम्बंध है दीपक में उभय पक्ष का अर्थात वर्ण्य के साथ अवर्ण्य का संबंध है तुल्य योगिता में विवक्षा की अपेक्षा है दीपक में धर्म स्वयं सिद्ध है। कोई२ कवि देहली दीपक को अलग अलंकार मानते हैं अर्थात् ऐसा पद रखना जो दोनों ओर लागू हो परंतु प्राचीनों ने उसे दीपक अलंकार के ही अन्तर्गत माना है देहरी दीपक को इसी ग्रंथ के न्याय प्रकरण में देखो।

१९ कारक दीपक

(The Case Illuminator)

कारक दीपक एक सें, क्रम तें भाव अनेक।
जानि चितय आवनि हँसनि, पूछनि धान विवेक॥

बहुतसी क्रमपूर्वक क्रियाओं में कर्ता एक कथन किया जाय, यथा—

१ [illegible] पाहन [illegible] गाहै।

२ बार बार [illegible] पुराति [illegible]। [illegible] [illegible]॥

१७ आवृत्ति दीपक

(Illuminator repeated)

आवृत्ति दीपक तीन विधि, आवृत्ति पद की होय।
घन वरसौं है री सखी, निसि वरसौं है सोय ॥

आवृत्ति=कई बार, घन बरसने पर ही है, रात्रि बरस सी हो रही है, यथा—

है विधि मिलै करन विधि बाला।

अर्थावृत्ति

दूजी आवृति अर्थ की, शब्द पृथक इक सार।
कूजहिं कोकिल चाव सों, गूंजहि भृंग अपार ॥

कूजहि गुंजहिं शब्द पृथक् तात्पर्य एक।

पदार्थावृत्ति

पद अरु अर्थ दुहून की, आवृत्ति तीजी आहि।
मत्त भये है मोर अरु, चातक मत्त सराहि ॥

मत्त मत्त पदावृत्ति, मत्त भये और मत्त सराहि—अर्थावृत्ति

१ भले भलाई पै लहहि, लहहि निचाई नीच।
सुधा सराहिय अमरता, गरल सराहिय मीच ॥

लहहिं लहहिं सराहिय सराहिय—पदार्थावृत्ति

२ तोऱ्यो नृपगण को गरब, तोऱ्यो हर को दंड।
राम जानकी जीय को, तोऱ्यो दुःख अखंड ॥

तोऱ्यो तोऱ्यो तोऱ्यो—पदार्थावृत्ति

१८ एकावलि

(The Necklace)

एकावलि पद रीति जहँ, गृहित मुक्त पद जान।
दृग श्रुति लौं श्रुति बाहु लौं, बाहु जंघ लौं मान॥

अवलि=पंक्ति, गृहीत=ग्रहण किया हुआ, मुक्त=त्यागा हुआ। इसमें पूर्व पूर्व के प्रति उत्तरोत्तर वस्तु का विशेषण भाव से स्थापन या निषेध होता है, यथा—

१ बिन गुरु होय कि ज्ञान, ज्ञान कि होय विराग बिन।

इसे "शृंखला" भी कहते हैं।

२ सो जल कहिये व्यर्थ, जहाँ चारु पंकज नहीं।
पंकज है सो व्यर्थ, जहाँ भ्रमर नहिं लीन है॥
भ्रमर में क्या सार, मधुर मधुर गुंजार न जो।
गुंजन हू बिन सार, जो न हरत मन जनन के॥

१९ प्रति वस्तूपमा

(Typical Comparison)

प्रतिवस्तूपम धर्मसम, जुदे जुदे पद जान।
सोहत भानु प्रताप सों, लसत सूर धनु बान॥

प्रति+वस्तु+उपमा। उपमान और उपमेय इन दोनों के वाक्यों में एक ही साधारण धर्म पृथक पृथक शब्द द्वारा कथन हो। 'सोहत भानु प्रताप सों' यह उपमान वाक्य है और 'लसत सूर धनुबान' यह उपमेय वाक्य है इसमें प्रत्येक वाक्य एक दूसरे से स्वतंत्र रहता है।

१७ आवृत्ति दीपक

(Illuminator repeated)

आवृत्ति दीपक तीन विधि, आवृत्ति पद की होय।
घन वरसौं है री सखी, निसि वरसौं है सोय॥

आवृत्ति=कई बार, घन बरसने पर ही है, रात्रि वरस सी हो रही है, यथा—

है विधि मिलै कवन विधि बाला।

अर्थावृत्ति

दूजी आवृति अर्थ की, शब्द पृथक इक सार।
कूजहिं कोकिल चाव सों, गुंजहिं भृंग अपार॥

कूजहि गुंजहिं शब्द पृथक् तात्पर्य एक।

पदार्थावृत्ति

पद अरु अर्थ दुहुन की, आवृत्ति तीजी आहि।
मत्त भये है मोर अरु, चातक मत्त सराहि॥

मत्त मत्त पदावृत्ति, मत्त भये और मत्त सराहि—अर्थावृत्ति

१ भले भलाई पै लहहिं, लहहिं निचाई नीच।
सुधा सराहिय अमरता, गरल सराहिय मीच॥

लहहिं लहहिं सराहिय सराहिय—पदार्थावृत्ति

२ तोन्यो नृपगण को गर्व, तोन्यो हर को दंड।
राम जानकी जीय को, तोन्यो दुःख अखंड॥

तोन्यो तोन्यो तोन्यो—पदार्थावृत्ति

१८ एकावलि

(The Necklace)

एकावलि पद रीति जहँ, गृहित मुक्त पद जान।
दृग श्रुति लों श्रुति बाहु लों, बाहु जंघ लों मान॥

अवलि=पंक्ति, गृहीत=ग्रहण किया हुआ, मुक्त=त्यागा हुआ। इसमें पूर्व पूर्व के प्रति उत्तरोत्तर वस्तु का विशेषण भाव से स्थापन या निषेध होता है, यथा—

१ बिन गुरु होय कि ज्ञान, ज्ञान कि होय बिराग बिन।

इसे "शृंखला" भी कहते हैं।

२ सो जल कहिये थाह, जहाँ चारु पंकज नहीं।
पंकज है सो काह, जहाँ भ्रमर नहिं लीन है॥
भ्रमर सो पर सार, मधुर मधुर गुंजन न जो।
गुंजन हू बिन सार, जो न हरै मन जनन के॥

१९ प्रति वस्तूपमा

(Typical Comparison)

प्रतिवस्तूपम धर्मसम, जुदे जुदे पद जान।
सोहत भानु प्रताप सों, लसत सूर धनु बान॥

प्रति+वस्तु+उपमा। उपमान और उपमेय इन दोनों के वाक्यों में एक ही साधारण धर्म पृथक् पृथक् शब्द द्वारा कथन हो, 'सोहत भानु प्रताप सों' यह उपमान वाक्य है और 'लसत सूर धनुबान' यह उपमेय वाक्य है इसमें प्रत्येक वाक्य एक दूसरे से स्वतंत्र रहता है।

कुवलयानंद के मत से कहीं२ वैधर्म्य से भी दृढ़ीकरणार्थ धर्म की साम्यता बताई जाती है । उदाहरण नीचे देखिये—

१ राजत राम अतुल बल जैसे (उपमान वाक्य)
तेज निधान लखन पुनि तैसे (उपमेय वाक्य)

२ पिशुन वचन सज्जन चितै, सकै फोरि ना फारि ।
कहा करै लगि तोय में, तुपक तीर तरवारि ॥

'सकै फोरि ना फार' और 'कहा करै' इन भिन्न पदों का अशक्तता रूप एक समान ही धर्म कथन किया गया ।

३ बुध जनहीं आनै भले, बुध जन श्रम गंभीर ।
बध्या क्यों करि, अनुभवै, तन प्रसून की पीर ॥

४ गुणी जनन के गुणनि को, आपुहि होत विकास ।
कस्तूरी आमोद नहि, शपथ किये कछु भास ॥

कहीं२ काकु से भी एक समान धर्म कहा जाता है, यथा—

५ सोमै वरणि सकै विधि केही । डावर कमठ कि मंदिर लेहीं ॥
६ सो धनु राजकुँवर कर देहीं । बाल मराल कि मंदर लेहीं ॥

सू०—रसगंगाधर के कर्त्ता पंडितराज जगन्नाथ के मत में प्रतिवस्तूपमा और दृष्टांत में थोड़ीही विलक्षणता के कारण अंतर है नहीं तो ये दोनों एकही अलङ्कार के भेद मात्र हैं ।

२० दृष्टांत

(Exemplification)

दृष्टांतहु प्रतिबिंब सम, दुहूं वाक्य सम दीख ।
कृष्ण प्रेम पगि जोग कस, राज्य पाय कस भीख॥

दृष्टांत=देखा गया है अंत अर्थात् निश्चय जहां, उदाहरण । दृष्टांत में एक से धर्म वालों की साम्यता बताई जाती है इसमें

उपमान उपमेय और साधारण धर्म का बिंब प्रतिबिंब भाव रहता है काव्य प्रकाश में दृष्टांत का लक्षण यों है। दृष्टान्तः पुनरेतेषां सर्वेषां प्रतिबिंबनम्। साहित्य दर्पण में इसका लक्षण यों लिखा है दृष्टांतस्तु सधर्मस्य वस्तुनः प्रतिबिंबनम्। इसमें दो वाक्य रहते हैं जिस वाक्य का निश्चय कराना हो सो दार्ष्टान्त है और जिस वाक्य द्वारा निश्चय कराया जाय सो दृष्टांत है सामान्य का समर्थन सामान्य से और विशेष का विशेष से होता है, यथा—

१ बड़ सनेह लघुन पर करहीं। अति गुरु गिरि तृण शिर धरहीं

२ पगीं प्रेम नँदलाल के, हमैं न भावत जोग।
मधुप राज पद पाय के, भीख न माँगत लोग॥

३ सबै सहायक सबल के, कोउ न निबल सहाय।
पवन जगावत आग को, दीपहिं देत बुझाय॥

४ प्रकृति मिले मन मिलत है, अनमिलते न मिलाय।
दूध दही तें जमत है, काञ्जी तें फट जाय॥

५ कनक सम्पति के जड़मति होत गुमान।
रहत भारत ज्ञान में, जिन पर परत निशान॥

६ निरखि रूप नँदलाल को, दृगन रुचै नहिं आन।
तजि पियूष कोउ करत, कटु औषधि को पान॥

७ बसै बुराई जासु तन, ताही को सनमान।
भलो भलो कहि छोड़िये, खोटे ग्रह जप दान॥

८ जगत जनायो जिहि सकल, सो हरि जान्यो नाहिं।
ज्यों आँखिन सब देखिये, आँखि न देखी जाहिं॥

९ ज्ञान दीप सिर मोहन देही। प्रभ भौर किय दाना लेही॥

१० मन मलीन तन सुंदर कैसे। विप रस भरा कनक घट जैसे॥

११ अनरस हू रस पाइये, रसिक रसीली पास।
जैसे सांटे की कठिन, गांठौ भरी मिठास॥

१२ मधुर वचन तें जात मिट, उत्तम जन अभिमान।
तनक शीत जल सों मिटे, जैसे दूध उफान॥

१३ रिसकी रसकी रसिक को, तेरी सबै सुहात।
तातें सीरे नीर तें, जैसे आग सिरात॥

१४ दोप एक गुण पुंज मे, होत निमग्न 'मुरार'।
जैसे चद्र मयूख मे, अंक कलंक निहार॥

किसी२ प्राचीन आचार्य ने उदाहरण नामक एक अलङ्कार अलग माना है परन्तु अन्य प्राचीन तथा अर्वाचीन आचार्यों ने उसे दृष्टांतर्गत ही माना है। लाला भगवानदीनजी ने अपने ग्रंथ अलंकार मंजूषा में इसकी उत्तम और युक्ति संगत विवेचना की है अर्थात् दृष्टांत में ज्यों, जैसे, वाचक नहीं होते, जिनमे ये वाचक हों सो उदाहरण है दृष्टांत में कवि का मुख्य लक्ष्य उपमान वाक्य (उत्तरार्ध भाग) पर होता है और उदाहरणालंकार कवि का मुख्य लक्ष्य उपमेय वाक्य (पूर्वार्ध भाग) पर होता है बात ठीक मालूम होती है और ध्यान देने योग्य है परंतु ऐसा प्रतीत होता है कि अनेक आचार्योंने यह भेद इसलिये छोड दिया कि जहा वाचक स्पष्ट रूप से नहीं आते वहा ऊपर से कहने में आते है और कोपकारों ने भी दृष्टांत और उदाहरण को एकही बात मानी है। कवि मुरारीदानजी ने दृष्टांत और उदाहरण दोनों अलंकार अलग अलग माने हैं परंतु वाचक रहते हुए भी उदाहरण नंबर १३ को उन्होंने दृष्टांतालंकार माना है।

२१ निदर्शना
(Illustration)

(१) निदर्शना आरोपनो, एक अर्थ दुहुं बंध।
मीठे वचन उदार के, सोने माहिं सुगंध॥

निदर्शना=दृष्टान्त दिखाना। जहां दो वाक्यों के अर्थ में समता भावसूचक ऐसा आरोप किया जाय कि दोनों एक समान पड़े चाहे वे असंभव न क्यों हों सो निदर्शना अलंकार है इसमें एक वाक्य दूसरे के अपेक्षित रहता है इसके वाचक जो, से, जे, ते, कहीं स्पष्ट रूप से रहते हैं और कहीं ऊपर से लगाने से आते हैं, यथा—

१ जड़ चेतन गुण दोष मय, विश्व कीन करतार।
संत हंस गुण गहहिं पय, परि हरि वारि विकार॥
२ सुन खगेश हरि भक्ति विहाई। जो सुख चाहे आन उपाई॥
सो शठ महा सिंधु बिन तरनी। पैर पार चाहत जड़ करनी॥
३ दाता माहीं सौम्यता, पूर्ण इन्दु निकलंक।
४ अंग नील मे चारु है, तामें पर पराग।
जैसे श्री [illegible], [illegible] [illegible] ते [illegible]॥
५ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] अंग [illegible]।
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible]॥

(२) और ठौर के धर्म को, और ठौर आरोप।
विद्रुम की चारु अरुन है, अधर ललाई ओप॥यथा-
१ नैन [illegible] [illegible] [illegible] है, है [illegible] [illegible]।
२ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।
[illegible] [illegible] [illegible] में [illegible] [illegible]॥

(३) आप अवस्था तें जहां, औरन को उपदेस।
धर्‍यो ताहि नहिं छांड़िये, कहत धरणि धर सेस ।

यथा—

संग लाय करिणी करि लेहीं । मानहुं मोहि सिखापन देहीं ॥

(यहां मानहुं शब्द उत्प्रेक्षा वाची नहीं केवल शिक्षा का आरोपक है) इस तृतीय भेद में जहा सत अर्थ कथन किया जाय वह सदर्थ निदर्शना और जहां असत अर्थ कहा जाय वहा असदर्थ निदर्शना जानो, यथा—

(सदर्थ निदर्शना)

१ धर्‍यो ताहि नहिं छाडिये, कहत धरणि धर सेस ।
२ भानु उदय निज होतही, कमलहिं अर्पत श्रीय ।
सपति को फल अनुग्रह, सुहृदन पर कम नीय ॥
३ पद कर हिय मुख चख समताई ।
पाय कमल अहमिति नहि लाई ॥
कीच बीच बसि अस सिखलावै ।
नमि जो चले ऊच पद पावै ॥

(असदर्थ निदर्शना)

१ राज विरोधी नसत है, यो जग को दरसात ।
चद्र उदय तें तम निकर, छिन छिन छीजत जात ।
२ सतापित करि दीन, लहत सतत को संपदा ।
अस्ताचल निमि लीन, भानु तपत दिन में जऊ ॥
३ भोग विलासहि में सदा, जन्म गमायो हाय ।
चितामणि को कांच के, मोलहिं दियो बहाय ॥

४ घट घट में हरि राजहीं, खोजत अनत वृथाहिं।
चिंतामणि गर में बँधी, अब ढूढ भू माहिं॥

सू०—दृष्टांत में दोनों वाक्य बिंब प्रतिबिंब भाव से स्वतंत्र रहते हैं और लोक प्रसिद्ध वाक्य से समता दी जाती है, निदर्शना में एक वाक्य दूसरे के आश्रित रहता है।

२२ व्यतिरेक
(Contrast)

व्यतिरेक जहँ उपमेय में, कोई बात विशेष।
मुख है अम्बुज सो सखी, मीठी बात विशेष॥

व्यतिरेक=विशेष भिन्नता, विराग।

१ राम नाम तें नाम बड़, बरदायक बरदानि।
राम चरित सत कोटि महँ, लिय महेस जिय जानि।

२ नव बिधु बिमल तात जस तोरा। रघुबर किंकर कुमुद चकोरा॥
उदित सदा अथइहि कबहूँ ना। घटिहि न जग नभ दिन दिन दूना॥

३ कहत सबै बेदी दिये, आँक दसौं गुन होत।
तिय लिलार बेंदी दिये, अगनित बढ़त उदोत।

४ संत हृदय नवनीत समाना। कहा कबिन पर कहै न जाना॥
निज परिताप द्रवइ नवनीता। पर दुख द्रवहिं सुसंत पुनीता॥

५ को बड़ छोट कहत अपराधू। सुनि गुन भेद समुझिहहिं साधू॥

६ कलि कर एक पुनीत प्रतापा। मानस पुन्य होहिं नहिं पापा॥

७ एक छत्र इक मुकुट मनि, सब बरनन पर जोय।
तुलसी रघुबर नाम के, बरन बिराजत दोय॥

२७ परिकरांकुर

(Sprout of Insinuator)

परिकर अंकुर नाम, साभिप्राय विशेष्य जहँ ।
नेक न मानत वाम, सूधेहू पिय के कहे ॥

जहा विशेष्य साभिप्राय हो वहां परिपरांकुर जानो जैसे वाम अर्थात् टेढ़ी ।

१ गुनहु लखन कर हम पर रोषू । (लख न=जो न लखे)*
२ वदन मयंक ताप त्रय मोचन ।
३ सुनहु विनय मम विटप अशोका ।
सत्य नाम करु हरु मम शोका ॥
४ बाल वेलि सूखी सुखद, इह रूखे रुख वाम ।
फेरि डहडही कीजिये, सरस सींचि घनश्याम ॥

२८ श्लेष

(Parono nasia)

श्लेष अलंकृत अर्थ बहु, एक वाक्य में होत ।
होये न पूरन नेह विन, ऐसो प्रगट उदोत ॥

श्लेप=अनेकार्थवाची पद । नेह=तेल, प्रेम । यथा—

१ साधु चरित शुभ सरिस कपासू ।
निरस विशद गुण मय फल जासू ॥
गुणमय=गुण से भरा हुआ, सूत से भरा हुआ ।
२ सगुण सभूषण शुभ सरस, सुवरण सुपद सुराग ।
इपि कविता अरु कामिनी, लहै जु सो बड भाग ॥

* यहा लख न शब्द साभिप्राय मानकर परिकरांकुर अलंकार है जहा यह साभिप्राय न माना जाय तो विषम अलंकार होगा ।

३ चरण धरत चिंता करत, तनिक न भावै सोर।
सुवरण को ढूंढत फिरत, कवि कामी अरु चोर॥

उदाहरण नंबर ३ तुल्ययोगिता भी होने से उभयालंकार है।

२९ अप्रस्तुत प्रशंसा
(Indirect Description)

अप्रस्तुत परशंस जहँ, प्रस्तुत अर्थहि होय।
राजहंस बिन को करै, छीर नीर को दोय॥

अप्रस्तुत=अनुपस्थित। यहां राजहंस अप्रस्तुत की प्रशंसा में किसी प्रस्तुत अविवेकी का वर्णन है। इसके पांच भेद हैं, (यह उदाहरण सारूप्य निबंधना का है)।

१ सारूप्यनिबंधना (रूप मिस रूप का कथन)

कांधे केसर बांधि के, रूप रच्यो मृगराज।
कूकर क्यों करि है कहो, करि कुंभ कंपन गाज॥

केसर=बाल यहां समरूप में अप्रस्तुत सिंह की प्रशंसा में किसी पठित रूप मूर्ख का वा शूर रूप कायर का वर्णन है यथा—

१ सुन दशमुख खद्योत प्रकाशा। कबहुँ कि नलिनी करहि विकाशा।
२ यद्यपि सरितपति सलिलपति, अरु रतनन की खानि।
तदपि बड़ाई समुद्र की, बुझै न पीवत पानि॥
३ चातक स्वाती बूंद बिन, पिये न रंचक नीर।
४ फिरौ हौं भूखो रहे, सिंह चरत नहिं दूब।
५ कै हंसा मोती चुगै, कै भूखो मरि जाय।

१ भल न कीन्ह तैं निशिचर नाहा। अब मुहिं आन जगायेउ काहा॥
अहह बंधु तै कीन खुटाई। प्रथम न मोहिं जगायेउ भाई॥
२ सीत वात आतप सह्यो, राखि तेरियै आस।
तऊ पपीहा की जलद, तैं न बुझाई प्यास॥
३ जिन जिन देखे वे कुसुम, गई सुबीत बहार।
अब अलि रही गुलाब में, अपत कटीली डार॥

सू०—प्रस्तुताकुर में कहने वाले का मुख्य तात्पर्य उससे होता है जिसके प्रति बात कही जाय। गूढोक्ति में किसी दूसरे सुनने वाले से होता है।

३१ पर्य्यायोक्ति

(Periphrasis)

(१) पर्य्यायोक्ती व्यंग सों, बोलै बचन रसाल।
चतुर वहै जो तुव गरे, बिन गुन डारी माल॥

पर्य्याय+उक्ति=अभीष्ट अर्थ का कथन उसी रूप से न कर दूसरे प्रकार से घुमा फिरा कर करना, यथा—

तिन कहँ नाथ कहन किमि चीन्हें। देखिय रवि कि दीप कर लीन्हें॥

(२) मिस करि कारज साधिये, दूजो भेद विशाल।
तुम दोऊ बैठो यहां, जात अन्हावन ताल॥यथा—

१ लखन हृदय लालसा बिसेखी। जाय जनकपुर आइय देखी॥
२ पूस मास सुनि सखिन सन, साईं चलत सवार।
लैकर बीन प्रवीन तिय, गायो राग मलार॥
३ सीता हरण तात जनि, कहेउ पिता सन जाय।
जो मैं राम तो कुल सहित, कहहि दशानन आय॥

३२ व्याज स्तुति

(Artful Praise or Irony)

(१) व्याज स्तुति निंदामिसहि, स्तुति निंदा होय।
स्वर्ग चढ़ाये पतित लौं, गंग कहा कहुं तोय॥

व्याज=बहाना, मिस। इस उदाहरण में उसी की निंदा में उसी की स्तुति हुई, यथा—

राम न सकहिं नाम गुण गाई।

इसके सब मिलकर ६ भेद हैं।

(२) उसी की स्तुति में उसी की निंदा।

सेमर तू बड़ भाग है, कहा सराहो जाय।
पंछी कर फल आस तुहिं, निसि दिन सेवहिं आय॥

१ अहो मुनीश महा भट मानी।

२ नाक कान बिन भगिनि निहारी। छमा कीन तुम धर्म बिचारी॥ लाजवन तव सहज सुभाऊ। निज गुण निज मुख कहसि न काऊ॥

३ जननी तू जननी भई, विधि सन कहा बसाय।

(३) और की निंदा से और की निंदा।

व्याज निंद निंदा मिसै, निंदा हो भरपूर।
सूर जो ऐसे सूर सों, नाम धर्यो अक्रूर॥ यथा—

विधिहु न नारि हृदय गति जानी। सकल कपट अघ अवगुण खानी॥

(४) और की स्तुति से और की स्तुति।

१ कानन सब अरविंद, कहाँ कीर कीन्हों कहा।
सेत न स्वाद निबाह, अधर मधुर में विद को॥

२ जासु दूत बल बरनि न जाई। तिहि आये पुर कवन भलाई॥

(५) और की निंदा से और की स्तुति ।

१ डर से नयहि भजहु हरि, कहा लाभ जिय जानि ।
२ एक कहत मुहिं सकुच अति, रहा बाल की कांख ॥
तिन महँ रावण कवन तैं, सत्य कहहु तजि माख ॥
यहां रावण की निंदा से बाल की स्तुति है ।

(६) और की स्तुति से और की निंदा ।

प्रभु प्रताप रवि उदय लखि, नृप शशि ज्योति मलीन ।

२३ आक्षेप

(Hint)

(१) तीन भांति आक्षेप है, इक प्रतिषेध विचार ।
चंद्र दरश दे वा अहै, तिय मुख प्रभा पसार ॥

आक्षेप=दूषण लगाना यथा—

१ प्रभु प्रसन्न ह्वै दीजिये, स्वर्ग धाम को वास ।
अथवा यातें फल कहा, करहु आपनो दास॥
२ सानुज पठइय मोहिं वन, कीजिय सबहिं सनाथ ।
नतरु फेरिये बंधु दुउ, नाथ चलौं मैं साथ ॥

निषेधाभास

(Seeming Hint)

(२) दुतिय निषेधा भास है, कोउ कवि जन मत लेख ।
हौं नहिं दूती अग्नि तें, तिय तन ताप विशेख ॥

निषेध+आभास=निषेध सा भासना ।

दूती तो थी ही तथापि कहती है कि दूती नहीं हूं वरण नायिका की प्रबल उत्कंठा हू ।

१ राम करहु सब संयम आजू। जो विधि कुशल निबाहै काजू॥
२ मोहि तु जानत है कपि हैं यह मैं कपि हौं नहि काल हौं तेरो।

विधि निषेध
(Hint Ambiguous)

(३) दुरे निषेध जु विधि वचन, भेद तीसरो आहि।
जाहु दई मुहिं जन्म दे, चले देस तुम जाहि॥ यथा-

१ राज देन कहि दीन वन, मुहिं न सोच लव लेश।
तुम बिन भरतहिं, भूपतिहिं, प्रजहि प्रचंड कलेश॥
२ भरत विनय सादर सुनिय, करिय विचार बहोरि।
करब साधु मत लोक मत, नृपनय निगम निचोरि॥
३ जदपि कवित रस एकौ नाहीं। राम प्रताप प्रगटयहि माहीं॥
४ कवि न होउं नहि चतुर कहाऊं मति अनुरूप राम गुण गाऊं॥

३४ विरोधाभास
(Contradiction)

वहै विरोधा भास, भासै जहां विरोध सो।
वा मुख चंद्र प्रकास, सुधि आये सुधि जात है॥ यथा-

१ तंत्री नाद कवित्त रस, सरस राग रति रंग।
अनबूड़े बूड़े तिरे, जे बूड़े सब अंग॥
२ [illegible] हेतु [illegible] गुसाईं। [illegible]॥
३ [illegible]।
४ लाल तिहारे रूप की, कहौ रीति यह कौन।
जासों लागत पलक दृग, लागत पलक पलौ न॥
५ या मुख की मधुराई कहा कहौं, मीठी लगै अँखियान लुनाई।

६ भये अलेख सोच बस लेखा (लेखा=देवता)

७ भरद्वाज सुनु जाहि जब, होत विधाता वाम ।
धूरि मेरु सम जनक यम, ताहि व्याल सम दाम ॥

८ वदौं मुनि पद कंज, रामायण जिन निर्मयो ।
सखरस कोमल मंजु, दोष रहित दूषण सहित ॥

३५ विभावना

(Peculiar Causation)

(१) विभावना पट हेतु विन, जहँ वरणत हैं काज ।
विन जावक दीन्हें चरण, अरुण लखे हैं आज॥

विभावना = गई है भावना जिसमें, जावक=महावर, अरुण=लाल, यथा—

बिनु पद चलै सुनै बिनु काना । कर बिनु कर्म करै विधि नाना॥
आनन रहित सकल रस भोगी । विन वाणी वक्ता बड़ जोगी ॥

(२) हेतु अपूरण तें जवै कारज पूरण होय ।
कुसुम वाण कर गहि मदन, सब जग जीत्यो जोय॥

यथा—

काम कुसुम धनु सायक लीन्हें । सकल भुवन अपने वश कीन्हें॥

(३) प्रति वंधक के होत हू, कारज पूरण मान ।
निसि दिन श्रुति संगति तऊ, नैन राग की खान॥

(श्रुति=वेद, कान) यथा—

रखवारे हति विपिन उजारा । देखत तोहि अछत तेहि मारा ॥

(४) जवै अकारण वस्तु तें, कारज परगट होत ।
कोकिल की वानी अवै, बोलत सुन्यो कपोत॥यथा-

१ भयउ तात निशिचर कुल भूषण।

२ पङ्कज तें पङ्कज उपज, सुन्यो न देख्यो नैन।
तिय मुख पंकज में लखे, द्वै इंदीवर ऐन॥

(५)-काहू कारण तें जबै, कारज होत विरुद्ध।
करत मोहिं संताप यह, सखी शीत कर शुद्ध॥ यथा-

(१) उरग स्वास सम त्रिविध समीरा।
(२) जेहि तरु रहौं करत सो पीरा॥

(६) पुनि कछु कारज तें जबै, उपजै कारण रूप।
नैन मीनतें देखियत, सरिता बहत अनूप॥ यथा--

१ जगत पिता में सुत करि जाना।
२ शंभु विरंचि विष्णु भगवाना। उपजहिं जासु अंश तें नाना॥
३ तुव कर कल्पहि तें प्रभू, यश पयोधि उत्पन्न।

३६ विशेषोक्ति

(Peculiar Allegation)

विशेषोक्ति जहँ हेतु सों, कारज उपजै नाहिं।
नेह घटत नहिं हिय जऊ, काम दीप बिन माहिं॥

[दीप=चिराग, नेह=प्रेम, तेल, यथा—

१ [illegible] ताकि [illegible] धनु [illegible]।
उठइ न [illegible] बालि बल [illegible]॥
२ करनादिक [illegible] भये, [illegible] न [illegible]।
३ भानु छिपो रज तें नहीं, [illegible] न [illegible]।
४ नीर भरे [illegible], [illegible] नैन।

३७ असंभव

(Improbality)

कहत असंभव ही जहां, होत असंभव काज ।
को जाने थो गोप सुत, गिरि धारैगो आज ॥ यथा-

१ अति सुकुमार युगल ममवारे। निशिचर सुभट महा वलभारे ॥
२ ऊधो हम नहिं जानतती, मन मोहन कूवरि हाथ बिके हैं।

३८ असंगति

(Dis Connection)

(१) होत असंगति हेतु अरु, कारज औरहिं ठोर।
कोयल मद माती भई, झूमत अम्बा मौर ॥

कोयल तो मद से मत्त हुई उसे झूमना था सो वह तो न झूमी आम की मौर झूमे, यथा--

१ जिन वीथिन विहरै सव भाई। थकित होहिं सव लोग लुगाई॥
२ और करै अपराध कोउ, और पाव फल भोग ।
३ सीता रावण ने हरी, बॉधो गयो समुद्र ।
४ वैल न कूदा कूदी गौन ।

(२) और ठौरही होत जहँ, और ठोर को काम ।
तिलक लगायो हाथ में, तुव वैरिन की वाम॥यथा-

१ जो जो भावै सोइ सोइ लेहीं। मणि मुख मेलि डारि कपि देहीं॥
२ ते पितु मात सखी कहु कैसे। जिन पठये वन वालक ऐसे ॥

(३) औरै काज अरंभिये, औरै करिये दौर।
मोह मिटायो नाहिं प्रभु, मोह लगायो और॥यथा-

१ मोह मिटावन हेतु प्रभु, तुम लीनो अवतार।
उलटो मोहन रूप धरि, मोहीं सब ब्रजनार॥

२ राज देन कहि शुभ दिन साजा। कहेउ जाउ बन केहि अपराधा॥

३९ विषम
(Incongruity)

(१) विषम अलंकृत तीन विधि, अन मिलते जु मिलाय।
कहँ कोमल तन तीय को, कहां काम की लाय॥

लाय=अग्नि, यथा—

१ कहँ कुम्भज कहँ सिंधु अपारा।
२ कठिन भूमि कोमल पद गामी।
३ जिहि विधि तुमहिं रूप अस दीना। तिहि जड़ वर बाउर कस कीना॥
४ राम सुकीरति भणित भदेसा। अस मंजस अस मोहिं अँदेसा॥
५ कहँ रघुवर के चरित अपारा। कहँ मति मोरि निरत संसारा॥

(२) कारण को कछु और रँग, कारज को कछु और।
जैसे श्याम असितें प्रगट, कीर्ति सेत चहुं ठौर॥

असि तलवार, यथा—

१ श्याम सुरभि पय विशद अति, गुनद करहिं सब पान।
२ या अनुरागी चित्त की, गति समुझै नहिं कोय॥
ज्यों ज्यों बूड़ै श्याम रँग, त्यों त्यों उज्ज्वल होय॥

(३) और भलो उद्यम किये, होत बुरो फल आय।
सखि भायो घनसार पै, अधिक भयो तन ताप॥

१ भले कहत दुख रौरेहु लागा ।

२ मूषक घुस्यो अहार हित, सर्प पिटारी जाय ।
मिल्यो अहार न तिहि कछू, सर्प गयो तिहि खाय॥

३ गुनहु लखन कर हम पर रोषू। कतहुं सुधाइउ तें बड़ दोषू॥

४ करत नीक फल अनइस पावा ।

प्राचीनों ने विषम के ३ ही भेद माने हैं परन्तु एक चौथा भेद भी प्रतीत होता है :—

(४) और बुरो उद्यम किये, भलो होय तत्काल ।
विष देते विषया दई, ऐसे दीन दयाल ॥

विषया=एक राजकन्या का नाम, यथा—
कालकूट फल दीन अमीके ।

४० सम
(Equal)

(१) सम भूषण है तीन विधि, यथायोग्य को संग ।
हार कठिन तिय उर बस्यो, जोय कठिन स्वइ अंग।

इस अलंकार को विषम का ठीक विरोधी समझो, यथा—

१ जस दूलह तस बनी बराता ।

२ चिरजीवौ जोरी जुरै, क्यों न सनेह गँभीर ।
को घटि ये वृषभानुजा, वे हलधर के बीर ॥

वृषभानुजा=वृषभान की कन्या, वृषभ+अनुजा=बैल की बहिन अर्थात् गाय, हलधर के बीर=बलदाऊ के भाई, हलधर के बीर=हल धारण करनेवाले बैल के भाई=बैल

३ आखर मधुर मनोहर दोउ ।

(२) कारणही के अंग सब, कारज माहीं चाहि।
नीच संग अचरज कहा, लछमी जलजा आहि॥ यथा

१ जो कुछ कहिय थोर सखि सोई। राम रघु अस काहे न होई॥
२ सीय दुसह दुख सहि लियो, सुता भूमि की होय।

(३) बिना विघ्नही काज जहँ, उद्यम करते होइ।
जाहि ढूंढ़ने में चल्यो, बीचहिं मिलिगो सोइ॥ यथा-

१ दुंदुभि अस्थि ताल दिखराये। बिन प्रयास रघुनाथ ढहाये॥
२ छुवतहि टूट पिनाक पुराना।
३ जपहि नाम जन आरत भारी। मिटहि कुसंकट होहिं सुखारी॥
४ भाव कुभाव अनख आलस हूं। नाम जपत मंगल दिसि दसहू॥

सू०—जिन पदों में एक से दूसरे की बराबरी, मित्रता, ईर्षा, होड़ इत्यादिक भाव प्रदर्शित हों सो उपमालंकार के ही अंतर्गत है परन्तु कोई२ इसको ललितोपमा तथा लक्ष्योपमा नाम से पृथक् अलंकार मानते हैं, यथा—

उत स्याम घटा इत है घनसे घन पांति उतै इत मोति लरी है।
उत दामिनि की चमकै इत उत चाप इतै भृकुटी [illegible] है।
उत चातक जो पिउ पीउ रटै रिसहै न इतै पिउ एक घरी है।
उत वृंद [illegible] इतै अँसुवा बरसा बिरहीन [illegible] है॥

४१ विचित्र

([illegible])

[illegible] विचित्र उलटो जतन, इच्छा फल के हेत।
[illegible] उचता [illegible] को, जे हैं पुरुष सचेत॥ यथा—

[illegible]

सू०—कोई२ इससे मिलता हुआ अनुकूल नामक अलंकार पृथक मानते हैं परन्तु वह विचित्रालंकार के ही अंतर्गत प्रतीत होता है, यथा—

प्रतिकूलहिं अनुकूल, करब सोइ अनुकूल है ।
दंड उचित बडि भूल, बांधु मोंहि निज भुजनतें ॥जैसे-
जो बांधेही तोप, तौ बांधौ अपने गुणनि ।

४२ अधिक

(Exceeding)

अधिक अधार अधेय तें, वा अधेय अधिकाय ।
गोपि हृदय त्रिभुवन पती, कीर्ति न सिंधु समाय॥

आधार=जिसमें कोई वस्तु ठहरे, आधेय=वह वस्तु जो आधार में ठहरे ।

(आधार बडा आधेय छोटा)

१ गोपि हृदय त्रिभुवन पती ।

यहां गोपि हृदय आधार बडा ठहरा और त्रिभुवनपति आधेय छोटा ठहरा ।

२ व्यापक ब्रह्म निरजनउ, निर्गुण विगत विनोद ।
सो अज प्रेमरु भक्तिरस, कौशल्या की गोद ॥*

यहां कौशल्या की गोद आधार बड़ी ठहरी और ब्रह्म आधेय छोटा ठहरा ।

(आधार छोटा आधेय बडा)

१ कीर्ति न सिंधु समाय ।

यहां सिंधु आधार छोटा ठहरा, कीर्ति आधेय बडी ठहरी ।

* यह उदाहरण विरोधाभास मे भी घटित होता है (उभयालङ्कार) ।

२ बहुत उछाह भवन अति थोरा ।
भवन आधार छोटा, उछाह आधेय बड़ा ।
३ अधिक सनेह समान न गाता ।
गात आधार छोटा, सनेह आधेय बड़ा ।

४३ अल्प

(Smallness)

रम्य जहां हो अल्पता, सो अल्पालंकार ।
अँगुरी की मुँदरी हुती, भुज में करत विहार॥ यथा—
१ रोम रोम प्रति राजहीं, कोटि कोटि ब्रह्मंड ।
२ गज मुख तंदुल कण गिरत, घटत न नेकु अहार ।
सो पिपीलिका लै चलत, पालत निज परिवार ॥

४४ अन्योन्य

(Reciprocal)

अन्योनहिं उपकार, जहां परस्पर पाइये ।
निशिहीं सो शशि सार, शशि सों निशि नीकी लगै॥ यथा—
१ मुनि रघुबीर परसपर नवहीं ।
२ मुनिहिं मिलत अस सोह कृपाला ।

४५ विशेष

(The Extraordinary)

(१) है विशेष त्रय भांति को, अनाधार आधेय ।
नभ ऊपर कंचन लता, कुसुम महा छवि देय ॥
यहाँ कंचन लता बिजली या आगी की पांति और कुसुम चंद्रमा मानों यथा—
गोद गिरि नभ निशि पावक मकर ।

(२) थोरेही आरंभ तें, फल पावै जहँ भूर ।
कल्पवृक्ष देख्यो सही, देखि तुमहिं सुखमूर ॥

आप सुखमूरि को हमने देखा तो साक्षात् कल्पवृक्ष ही देख लिया अर्थात् थोडे लाभ को अधिक मान लेना, यथा—

१ कपि तव दरस सकल दुख बीते। मिले आज मुहिं राम सप्रीते॥
२ आजुकी या छवि देखि भटू अब देखिवे को न रह्यो कछु बाकी॥

(३) वस्तु एक को कीजिये, वर्णन ठौर अनेक ।
अंतर बाहर दिसि विदिसि, व्याप रहो प्रभु एक ॥

यथा—

१ निज प्रभु मय देखहिं जगत, कासन करहिं विरोध ।
२ मो में तो में खड्ग खभ में, कहां बताऊ दूर ।
३ सीयराम मय सब जग जानी। करौं प्रणाम जोरि जुग पानी॥

४६ व्याघात
(Frustration)

(१) व्याघात जु कछु और सों, कीजे औरहि कार ।
सुख पावत जासों जगत, तासों मारत मार ॥

व्याघात=विघ्न, धक्का—जिस पदार्थ से जो कार्य होना चाहिये उससे कोई दूसराही कार्य किया जाय जैसे कटाक्षादि से जगत आनंदित होता है उसी से मार (कामदेव) जो है सो मारने का कार्य करता है, यथा—

१ देखहु तात वसंत सुहावा। प्रियाहीन मुहिं डर उपजावा ॥
२ उरग श्वास सम त्रिविध समीरा ।

(२) वहुरि विरोधी तें जवै, काज आपनो सार ।
निहिचे जानत चाल तो, करत काह परिहार ॥

जहां कारण को उलटा सिद्ध करके भी उससे कार्य सिद्ध किया जाय, जैसे एक राजा अपने लड़के से कहता है "तू नादान बच्चा है इसलिये युद्ध में नहीं ले जाते" लड़का कहता है कि अगर आप नादान बच्चा समझते हैं तो मुझे त्यागना उचित नहीं, यथा—

१ ऐसे वचन कठोर सुनि, जो न हृदय बिलगान ।
तौ प्रभु विषम वियोग दुख, सहिहैं पामर प्रान ।
२ राखिय अवध जु अवधि लग, रहत जानिये प्रान ॥

४७ कारणमाला

(Garland of Causes)

कारणमाला जान, कारण काज परम्परा ।
नीतहिं धन, धनदान, दानहिं तें फैलै सुजस ॥

नीति से धन, धन से दान, और दान से सुयश फैलता है, यथा—

१ धर्म तें बिरति बिरति तें ज्ञाना । ज्ञान मोक्षप्रद वेद बखाना ॥
२ विद्या तें उपजै विनय, विनय जात बुध होत ।
नगन भर्म धन पर मिलत, धन में धर्म उदोत ॥
३ बिनु सतसंग न हरि कथा, तेहि बिन मोह न भाग ।
मोह गये बिनु राम पद, होय न दृढ़ अनुराग ॥

४८ मालादीपक

(The Serial Illuminator)

माला दीपक पूर्व पद, उत्तर प्रति उपकार।
रस सों काव्यरु काव्य सों, सोभा वचन अपार॥

दीपक और एकावलि के मेल से यह अलंकार होता है, यथा—

१ जग की रुचि व्रजवास, व्रज की रुचि व्रज चंद हरि।
हरि रुचि वंसी "दास", वंसी रुचि मन बाँधिबो॥

२ श्री हनुमान हिये रघुनाथ बसैं रघुनाथहिं में सब लोक है

४९ सार

(The Climax)

सार होत है अधिक जब, इकतें एक बखान।
मधु सों मधुरी है सुधा, कविता मधुर महान॥

इस अलंकार में (उत्कर्ष) अधिक से अधिक वा (अपकर्ष) न्यून से न्यून दोनों का समावेश होता है, यथा—

१ अधम तें अधम अधम अति नारी। तिन महँ मैं मति मंद गँवारी॥

२ तृणतें लघु है तूल, तूलहुतें लघु माँगनो (? मंगन, भिखारी)

३ गिरि तें बडो है सिंधु, सिंधुहू तें नभ पुनि, नभहू तें ब्रह्म ब्रह्महूतें बडी आशा है।

५० यथासंख्य

(Relative order)

यथासंख्य वर्णन विषय, वस्तु अनुक्रम संग।
कर अरि मित्त विपत्ति को, गंजन रंजन भंग॥ यथा—

१ वंदौं राम नाम रघुवर को। हेतु कृशानु भानु हिम कर को॥
यहां राम शब्द के माहात्म्य वर्णन में रकार अकार और मकार का क्रमपूर्वक वर्णन है।

२ अमी हलाहल मद भरे, सेत स्याम रतनार।
जियत मरत झुकि झुकि परत, जिहि चितवत इक बार॥

जहां क्रम भंग हो वह निकृष्ट यथासंख्य है, यथा—

३ सचिव वैद्य गुरु तीन जो, प्रिय बोलहिं भय आस।
राज्य धर्म तन तीन को, होय बेगही नास॥

सू०-इसको क्रमालङ्कार भी कहते हैं।

५१ पर्य्याय

(The Sequence)

(१) पर्य्यायहिं क्रमते जबै, बहु इक आश्रय पाय।
हुती चपलता चरण में, भई मंदता आय॥

पर्य्याय=सम अर्थ को बोध करानेहारा शब्द। इसमें अनेकों का आश्रय एक स्थल में होता है जैसे-जिन चरण में पहिले चपलता थी वहां अब मंदता आगई, दोनों का आश्रय एक चरणही है, यथा—

१ जनक तजेउ सुख सोच बिहाई।

२ हुती देह में लरिकई, पुनि तरुनाई जोर।
थिरताई आई अबहिं, मन ते नन्दकिसोर॥

(२) फिर क्रमतें जब एकहीं, बहुतन आश्रय पाय।
लीन्ह बदन दुति कमल तजि, चंद्रहि नहीं बनाय॥

इसमें एकही अनेक स्थलों में आश्रय लेता है, यथा —

१ मणि माणिक मुकता छवि जैसी । अहि गिरि गज शिर सोह न तैसी ॥
नृप किरीट तरुणी तन पाई । लहैं सकल सोभा अधिकाई ॥
२ सती विधात्री इंदिरा, देखीं अमित अनूप ।
जिहि जिहि वेष अजादि सुर, तिहि तिहि तनु अनुरूप॥
३ नाम अनंत अनंत गुण, अमित कथा विस्तार ।
४ कामरिवारे अहीर येई ब्रज बीच विराजत कुंजविहारी ।

५२ परिवृत्ति

(The Return)

परिवृत्ती न्यूनाधिकौ, कछू देत कछु लेत ।
लहत संपदा शंभु की, वेल पत्र इक देत ॥

परिवृत्ति=विनिमय, कुछ लेना कुछ देना, अदल बदल करना

(थोड़ा देकर वहुत लेना)

लहत सपदा शंभु की, वेलपत्र इक देत ।

(बहुत देकर थोड़ा लेना)

तारा विकल देखि रघुराया । दीन ज्ञान हरि लीनी माया ॥

५३ परिसंख्या

(The Special Mention)

परिसंख्या इक थल वरजि, दूजे थेल ठहराय ।
नेह हानि हिय में नहीं, भई दीप में जाय ॥

परिसंख्या=बदले में एक वस्तु को उसी सदृश दूसरे स्थल में ठहराना, यथा—

१ दंड यतिन कर भेद जहँ, नर्तक नृत्य समाज।
  दंड अपराधियों को होता है वहां न होकर यतियों के हाथ में देखा गया भेद भाव अमित्रों में होता है वहां न होकर नाचने वाले में देखा गया।

२ केशनही में कुटिलता, सचारिन में शंक।
  लख्यो राम के राज्य में, इक शशि माहिं कलंक॥

३ पत्राही तिथि पाइये, वा घर के चहु पास।
  नित प्रति पूनो ही रहत, आनन ओप उजास॥

४ नृपति राम के राज्य में, है न शूल दुख मूल।
  लखियत चित्रन में लिखो, शंकर के कर शूल॥

५४ विकल्प

(The Alternstive)

है विकल्प के तो वहे, के यह कहे त्रिहाल।
दूर करेगो विरह दुख, के गुपाल के काल॥

विकल्प=नाना विधि कल्पना। इसमें संधि विग्रह रूप से दो तुल्य विरोधी परिणामों का एक साथही कथन होता है।

१ जन्म कोटि लगि रगर हमारी। बरौं संभु नतु रहौं कुमारी॥

२ धी तनु प्राण की केवल माना। तिणि करतर कछु जात न जाना॥

५५ समुच्चय

(Tl e Conjunction)

(१) होत समुच्चय भाव बहु, उपजैं इक सँग आय।
तुव अरि भाजत गिरत फिर, भाजन दै मनमाय॥

मधुपर -मधुर, यथा—

चकित थकित हुँसी पहिचानी। देखि बिवाह [illegible]॥

२ सो नर क्यों दशकंध, वालि वध्यो ज्यहि एक शर।

३ श्याम गौर किमि कहौं बखानी। गिरा अनयन नयन
 बिनु बानी ॥

४ तजि तीरथ हरि राधिका, तनै दुति कर अनुराग।
 जिहि ब्रज केलि निकुंज मग, पग पग होत मयाग ॥

५ मेरी भव बाधा हरौ, राधा नागरि सोय।
 जातन की झाईं परे, श्याम हरित दुति होय ॥

काव्यलिंग में जो शब्द वा भाव जिस योग्य हो उसी का युक्ति अर्थात् हेतुपूर्व्वक समर्थन करना है।

६ धर्महीन मभु पद विमुख, काल विवश दशशीश।
 आये गुण तजि रावणहिं, सुनहु कौशलाधीश ॥

६० अर्थांतरन्यास

(The Tians tion)

है अर्थांतरन्यास, जहँ विशेष सामान्य दृढ़।
नृप कर पान पलास, पहुंचत है संग पानके ॥

अर्थ=मतलब, अतर=दूसरा, न्यास=रखना। इसमें सामान्य कथन विषेश कथन द्वारा तथा विशेष कथन सामान्य कथन द्वारा उदाहरणवत् पुष्ट होता है अर्थात् एक वाक्य का समर्थन दूसरे वाक्य से होता है।

(सामान्य कथन विशेष कथन द्वारा पुष्ट)

१ नृप कर पात पलास (सामान्य कथन)
 पहुंचत है सँग पान के (विशेष कथन)

२ बड़े न हूजे गुणन विन, बिरद बड़ाई पाय (सामान्य कथन)
 कनक धतूरे सों कहैं, गहनो गढ़ो न जाय (विशेष कथन)

३. राम एक तापस तिय तारी (सामान्य कथन)
नाम कोटि खल कुमति सुधारी (विशेष कथन)
४ राम भजन बिनु मिटहिं न कामा (सामान्य कथन)
थल बिहीन तरु कबहुं कि जामा (विशेष कथन)

(विशेष कथन सामान्य कथन द्वारा पुष्ट)

१ हरि प्रताप गोकुल बच्यो (विशेष कथन)
कानहिं करहिं महान (सामान्य कथन)
२ परशुराम पितु आज्ञा राखी (विशेष कथन)
मारी मातु लोक सब साखी (सामान्य कथन)

सू०—इस अलंकार में वाचक नहीं होता।

६१ विकस्वर

(The Expansion)

विकस्वर होत विशेष जब, फिर सामान्य विशेष।
हरि गिरि धार्यो सत पुरुष, भार सहैं ज्यों शेष॥

विकस्वर=विस्तृत कथन, यथा—

हरि गिरि धार्यो (विशेष) सत्पुरुष भार सहैं (सामान्य) ज्यों शेष (विशेष) यथा—

उपरि पवन सुत पावन नामू। अपने बस करि राखेउ रामू॥

६२ प्रौढोक्ति

(The Bold Speech)

प्रौढोक्ती उत्कर्ष को, करै अहेतहिं हेत।
जमुना तीर तमाल से, तेरे बाल असेत॥

प्रौढ़=दृढ, उक्ति=कथन, उत्कर्ष=बडाई–यहां जमुना तीरही के तमाल अधिक श्यामता के कारण नहीं, क्योंकि तमाल कहीं के हों सब एकसे ही काले होते हैं अतएव प्रौढ़ोक्ति, यथा—

काम कलभ कर भुजबल सींवां ।

६३ संभावना

(The Supposition)

संभावना विचार, यो होवै तो होय यों ।
लहतो गुणनि अपार, वक्ता होतो शेष जो ॥ यथा—

१ जो तुम अवत्यो मुनि की नाईं । तौ पद रज शिर धरत गुसाईं ॥

२ यह विधि उपजै लच्छि जब, सुंदरता सुख मूल ।
तदपि सकोच समेत कवि, कहैं सीय सम तूल ॥

६४ मिथ्याध्यवसिति

(The False Determination)

मिथ्याध्यवसिति झूंठ हित, कहे जु झूंठी रीति ।
धरे जु माला नभ कुसुम, करे सु पुरातिय प्रीति ॥

मिथ्या=झूठ, अध्यवसिति=यह ऐसा ही है ऐसा ठान लेना, यथा—

१ कमठ पीठ जामहिं बहु बारा । बंध्यासुत बरु काहू मारा ॥

२ वारि मथें घृत होय बरु, सिकतातें बरु तेल ।

६५ ललित
(Artful Indication)

ललित कह्यो कछु चाहिये, ताही को प्रतिविंब ।
सेतु बांधि करिहौ कहा, गयो उतरि अब अंब ॥

केवल प्रतिबिंब वाक्य कह कर ही अभिप्राय सूचित करना, यथा—

१ सुनिय सुधा देखिय गरल, सब करतूत कराल ।
जहँ तहँ काक उलूक बक, मानस सकृत मराल ॥

अमृत केवल सुनने में आता है विष साक्षात देखा जाता है अर्थात् राम राज्य केवल सुनने में आया देखने में नहीं ।

२ लिखत सुधाकर लिखिगा राहू । विधि गति बाम सदा सब काहू ॥

अभिप्राय यह है कि रामजी का राज्याभिषेक तो न हुआ उलटा बनवास होगया ।

३ यह पापिनिहिं सूझ का परेऊ । छाय भवन पर पावक धरेऊ ॥

६६ प्रहर्पण
(Rapture)

(१) तीन प्रहर्पण जतन बिन, वांछित फल जो होय ।
जाको चित चाहत हुतो, आइ दूती सोय ॥ यथा—

१ निरखत रूप रहेउँ हिरानी । सब सद्द देखि हुलासी रानी ॥
नाथ सकल साधन मैं हीना । कीन्ही कृपा जानि जन दीना ॥

२ जो इच्छा करिहौ मन माहीं । हरि प्रसाद कछु दुर्लभ नाहीं ॥

३ सुनु सिय सत्य असीस हमारी । पूजिहि मन कामना तुम्हारी ॥
४ सुफल मनोरथ होयँ तुम्हारे । राम लखन सुनि भये सुखारे॥

(२) वांछित हूतें अधिक फल, श्रम विन लह मनमान।
दीपक को उद्यम कियो, तौलों उद्यो भान॥यथा-

१ धरहु धीर हुइहै सुत चारी । त्रिभुवन विदित भक्त भयहारी ॥
(मांगने गये थे एक मिले चार)
२ सुनत वचन बिसरे सब दूखा । तृषावंत जिमि पाय पियूषा ॥

(३) सोधन जाके जतन को, वस्तु चढ़ै कर आन ।
निधि अंजन की औषधी, सोधत लह्यो निदान॥

जमीन में गड़े हुए धन के प्राप्त्यर्थ अंजन की औषधी ढूंढतेही ज़मीन का गडा हुआ धन मिल गया, यथा—

१ यह बिधि मन विचार कर राजा । आय गये कपि साहित समाजा ॥
२ हरि की सुधि को राधिका, चली अली के भौन ।
हँसत बीचही मिलि गये, वरणि सकै सुख कौन ॥

६७ विषाद
(Despondency)

सो विषाद चित चाहते, उलटो कछु हो जाय ।
राज्य देन कहि दीन वन, विधि गति जानि न जाय॥यथा

१ केशव तुम ऐसी करी, वैरिउ करिहै नाहिं ।
चन्द्र वदन मृग लोचनी, बाबा कहि कहि जाहि ॥

२ लिखत सुधाकर लिखिगा राहू।

यह उदाहरण व्यंग्यार्थ में विषाद है "ललित में प्रतिबिंब भाव तथा वाच्यार्थसे ललितालंकार है(उभयालंकार)

३ उदिहैं खिलिहैं कमल जब, निशि बीते पर प्रात।
यों सोचत अलि कोशगत, करि विनस्यो जल जात॥

६८ उल्लास
(Abandonment)

**गुण औगुण जब और के, और धरे उल्लास।
तिय के तन पानिप बढ़े, पिय के नैननि प्यास॥**

(१) गुण से गुण

१ न्हाय संत पावन करैं, गंग धरे यहि आस।

२ जे हरषहि पर संपति देखी।

३ सठ सुधरहिं सतसंगति पाई।

अगर इसके साथ दूसरा पद "पारस परसि कुधातु सुहाई" लगावें तो यह दृष्टान्तालंकार होगा।

४ मज्जन फल देखिय ततकाला। काक होहिं पिक बकउ मराला॥

(२) गुण से दोष

१ तिय के तन पानिप बढ़े, पिय के नैननि प्यास।

२ जरहिं सदा पर संपति देखी।

(३) दोष से गुण

१ परहित हानि लाभ जिन केरे।

२ खल परिहास होइ हित मोरा।

३ दुखी होहिं पर बिपति बिसेषी।

४ धरे अध [illegible]॥

(४) दोष से दोष

१ दुखित होहिं पर विपति विशेखी।
२ कुटिल कूबरी संगतें, भये त्रिभंगीलाल।

६९ अनुज्ञा

(Permission)

होत अनुज्ञा चाहतें, दोषहिं गुण ठहराय।
लगै कलंक निशंक तौ, मिलौ मोहनै जाय॥

अनुज्ञा=आदेश, हुकुम, इजाज़त, यथा—
रामहिं चितय सुरेश सुजाना। गौतम शाप परम हित माना॥

७० अवज्ञा

(Disregard)

(१) होत अवज्ञा और के, औरहिं नहिं गुण दोष।
परम सुधाकर किरण तें, खुलैं न पंकज कोष॥

अवज्ञा=अनादर, अवहेलना। इसका एक भेद 'तिरस्कार' और है।

(एक का गुण दूसरा न गहै)

१-लोटा बोरे समुद में, अधिक न जल कछु लेत।
२ राजत शिव के भाल तऊ, शशि धोयो न कलंक।
३ ऊसर बरसे तृण नहिं जामा।

(एक का दोष दूसरा न गहै)

१ चंदन विष लागै नहीं, लपटे रहैं भुजंग।
२ पत्र न लहै करीर, दोष बसंतहि को कहा।
चातक मुख नहिं नीर, दोष मेघ को ना कछू॥

तिरस्कार (The Contempt)

(२) तिरस्कार कछु दोष सों, त्याग वस्तु गुणमान।
वा सोने को जारिये, जासों टूटे कान॥ यथा—

१ सो सुख धर्म कर्म जरि जाऊ। जहँ न राम पद पंकज भाऊ॥
२ कह पग्गन में जो धनै धनी मन में न लागे हरि जन में,
तो धूक ऐसे धन में।

७१ लेश

(Suggestion)

लेश दोष में गुण लखे, गुण में दोष अधीर।
काक कटुक निधरक फिरत, परत पींजरे कीर॥

(दोष में गुण लखे)

१ काक कटुक निधरक फिरत।
२ जो नहिं होत मोह अति मोही। मिलितेउँ तात कवन
विधि तोही॥
३ कहा कहौं वाकी दसा, हरि प्रानन के ईस।
विरह ज्वाल जरिबो लखै, मरिबो भई असीस॥
४ बालि परमहित जासु प्रसादा। मिल्यो राम तुम शमन विषादा॥

(गुन में दोष लखै)

१ परत पींजरे कीर। (मीठी बानी बोलि के)
२ होहि हीन गुन सुजस सुभाऊ। [illegible]॥

७२ मुद्रा

([illegible])

मुद्रा प्रस्तुत पद विषय, औरै अर्थ प्रकास।
[illegible] गुन पद [illegible]॥

'राग' लाल रंग को भी कहते हैं, यथा—

१ चंदन विष व्यापै नहीं, लपटे रहत भुजंग ।

२ पायस पालिय अति अनुरागा । होहिं निरामिष कबहुं कि कागा ॥

३ राखौ मेलि कपूर में, हींग न होत सुगंध ।

इस अलंकार में गुण शब्द रूप रस गंधादिवाची माना जाता है ।

७७ अनुगुण
(The Conformity)

अनुगुण संगति ते जबै, पूरण गुण सरसाय ।
मुक्त माल हिय हास्य तें, अधिक सेत हो जाय ॥

अनु=बढ़ना, दूसरे के संग से अपना पहिले वाला गुण बढ़े, यथा—

१ मज्जन फल देखिय तत्काला। काक होहिं पिक बकहु मराला * ॥

२ मणि माणिक मुक्ता छवि जैसी । अहि गिरिगज सिर सोहन तैसी ॥
नृप किरीट तरुणी तन पाई । लहहिं सकल सोभा अधिकाई ॥

३ चंपक हरवा अंग मिलि अधिक सोहाय ।

७८ मीलित
(The Lost)

मीलित जो सादृश्य तैं, भेद न जबै लखाय ।
अरुण बरण तिय चरण पै, जावक लख्यो न जाय ॥

मीलित=मिला हुआ, यथा—

* यह उदाहरण उल्लास में भी घटित होता है (गुण से गुण) अतएव उभयालङ्कार ।

१ वेणु हरित मणिमय सब कीन्हें । सरल सपर्ण परहिं नहिं चीन्हें ॥

२ पँखुरी लगी गुलाब की गात न जानी जाय ।

मीलित में नीच गुणवाली वस्तु श्रेष्ठ गुणवाली वस्तु में विलीन हो जाती है ।

७९ सामान्य

(The S unonosa)

सामान्य जु सादृश्य तें, जानि परै न विशेष ।
नाहिं फरक श्रुति कमल अरु, तिय लोचन अनिमेष॥

जहां भेद रहते हुए भी सादृश्य से कोई विशेषता न दिखाते हुए जो वाक्य कहा जाय वह सामान्यालंकार है जैसे— अनिमेष (खुले हुए) तिय के नैनों में और कान में खोंसे हुए कमल पुष्प में कोई अंतर नहीं देख पड़ता, यथा—

१ एक रूप तुम भ्राता दोऊ ।

२ भरत राम की अनुहारी । सहसा लखि न सकैं नर नारी ॥

३ गिरा अर्थ जल बीचि सम, कहियत भिन्न न भिन्न ।

८० उन्मीलित

(The Unlost)

उन्मीलित सादृश्य तें, हेतु भेद कछु मानि ।
कीरति आगे तुहिन गिरि, छुए परस ते जानि॥

उन्मीलित=खोला हुआ, जगाया हुआ, प्रकट किया हुआ, जैसे कीर्ति द्वारा हिमगिरि और स्वच्छ है कि उसके सफेद हिमालय भी बिना छुए हुए ज्ञात नहीं पड़ता, यथा—

१ वंदों संत असज्जन चरणा। दुख मद उभय बीच कछु वरणा॥

२ सम प्रकाश तम पाख दुहुं, नाम भेद विधि कीन।
शशि पोषक शोषक समुझि, जग जस अपजस दीन॥

३ चंपक हरवा अंग मिलि, अधिक सुहाय।
जानि परै सिय हियरे, जब कुँभिलाय॥

८१ विशेषक

(The Un sameness)

वहै विशेषक जो फुरे, निश्चय समता मांझ।
जानै तिय मुख अरु कमल, शशि दर्शनतें सांझ॥

विशेषक=विशेष करके जो परीक्षा से पाया जाय, जैसे-तालाब में तैरती हुई नायिका के मुख और कमल में भेद नहीं जान पड़ता संध्या समय चद्र दर्शन से कमल मुंदने पर जान पड़ता है, यथा—

१ सोइ सर्वज्ञ गुणी सोइ ज्ञाता। राम चरण जाको मन राता॥

२ जानि परत हैं काक पिक, ऋतु वसंत के माहिं॥

उन्मीलित में हेतु की और विशेषक में समय वा अवसर की अपेक्षा है।

८२ गूढ़ोत्तर

(The Secret Reply)

(१) गूढ़ोत्तर कछु भाव तें, उत्तर दीने होत।
हों मैं दशनन मध्य ज्यों, जीभ विचारी होत॥

इसमें कहीं प्रश्न पूछने पर उत्तर होता है और कहीं प्रश्न मान लिया जाता है और उत्तर होता है यथा—

१ सुनहु पवनसुत रहनि हमारी । जिमि दशनन महँ जीभ विचारी ॥
२. कह दशकंठ कवन तैं बंदर । मैं रघुबीर दूत दशकंधर ॥

चित्रोत्तर
(The Skilful Reply)

(२) चित्र प्रश्न उत्तर दुहू, एकहि पद में होय ।
को है जारत अगिन बिनु, कोरे नेह न होय ॥

प्रश्न—बिना अग्नि कौन जलाता है, उत्तर कोह=क्रोध ।
प्रश्न—स्नेह विहीन पुरुष को क्या कहते हैं, उत्तर=कोरा ।
प्रश्न—का वर्षा जब कृषी सुखाने का=क्या, का=हुआ ।
प्रश्न—तात कहाँतें पाती आई, उत्तर=तात कहाँतें=तात के पास से।

(३) कै अनेकही प्रश्न को, एकहि उत्तर धार ।
वारि बताय विहारि मृग, सर न नवेली नार ॥

प्रश्न—जल बताओ, मृग की शिकार करो, उत्तर सर नहीं ।
पथी प्यासा जाय, गदहा रहो उदास क्यों ।
उत्तर दीन बताय, एक वचन 'लोटा नहीं' ॥

शब्दालंकार में जो प्रहेलिका हैं वे शब्दांतर्गत हैं और प्रहेलिका अर्थान्तर्गत हैं वे चित्रोत्तर अलंकार के अन्तर्गत मानना चाहिये, यथा—

१ पानी में निशि दिन रहै, जाके हाड़ न मास ।
काम करै तलवार का, फिर पानी में बास (कुम्हार का डोरा)
२ सीस जटा पोथी गहे, स्वेत वसन तन माहिं ।
जोगी जगम है नहीं, ब्राह्मण पंडित नाहिं ॥ ([illegible])
३ [illegible] ॥ ([illegible])

४ सिर पर सोहै गंग जल, मुडमाल गल माहिं ।
वाहन वाको वृषभ है, शिव कहिये की नाहिं ॥ (रहँट)

८३ सूक्ष्म

(The Subtle)

सूछम पर आशय लखे, करै क्रिया कछु भाय ।
मैं देख्यों उन शीश मणि, केशन लियो छिपाय ॥

सूक्ष्म–इशारा देखकर कुछ क्रिया के इशारे से ही उत्तर देना
शीश फूल काले बालों में छिपाने से इशारा निकला
कि अभी चादनी है अँधेरे में मिलेंगे, यथा—

१ सुनि केवट के बैन, प्रेम लपेटे अटपटे ।
बिहंसे करुणा ऐन, चितै जानकी लखन तन ॥
२ सीतहिं सभय देखि रघुराई । कहा अनुज सन सैन बुझाई ॥

८४ पिहित

(The Covering)

पिहित छिपी पर बात को जानि दिखावै भाय ।
प्रातहिं आये सेज पिय, हँसि दाबत तिय पांय॥

पिहित=आच्छादित, छिपा हुआ व छिपी हुई, यथा—
१ सती कपट जाना सुरस्वामी ।
२ जोरि पाणि प्रभु कीन प्रणामू । पिता समेत लीन्ह निज नामू॥

८५ व्याजोक्ति

(The Dissembler)

व्याज उक्ति कछु और विधि, कहे दुरै आकार ।
सखि सुक काटे अधर ये, दंतनि जानि अनार ॥ यथा—

१ नाम प्रताप भानु अवनीसा । तासु दूत मैं सुनहु मुनीसा ॥
२ बहुरि गौरि कर ध्यान करेहू । भूप किशोर देखि किन लेहू ॥

छेकापह्नुति में निषेध से छिपाना है, व्याजोक्ति में गुप्त भेद प्रगट होजाने पर किसी बहाने से उसको बिना निषेध छिपाना है।

८६ गूढ़ोक्ति

(The Secrecy)

गूढ़ोक्ती मिस और के, करे और सों बात ।
काल सखी मैं जाउँगी, शिव पूजन परभात ॥ यथा—

पुनि आउब यहि बिरियाँ काली ।
अस कहि मन बिहँसी इक आली ॥

इस अलंकार में कहने वाले का तात्पर्य किसी दूसरे सुनने वाले से होता है जिससे बात कही जाती है उससे नहीं वस्तुतः में कहने वाले का मुख्य तात्पर्य उससे होता है जिसके प्रति बात कही जाय।

८७ विवृत्तोक्ति

([illegible])

विवृतोक्ति है श्लेष छिपो परगट किये ।
कहत जनावे सैन, नृप भाग्यो पर सैन तें ॥

विवृत=उघारा हुआ, उक्ति=वचन, जो छिपा आशय था सो श्लेष शब्द से खोल दिया, यथा—

१ बेगि बिलम्ब न करिय नृप, साजिय सबै समाज ।
सुदिन सुमंगल तबहि जब, राम होहिं युवराज ॥
२ भाँति विरोध समाज मन, करिय नीति [illegible] ।
जो [illegible] पद पंकजनि, [illegible] ॥

८८ युक्ति

(Covert Speech)

युक्ति यहै कीन्हे क्रिया, मर्म छिपायो जाय ।
पीय चलत आंसू चले, पोंछत नैन जँभाय ॥

युक्ति=चतुराई, हिकमत, यथा—

१ वहुरि वदन विधु अंचल ढांकी। पिय तन चितै भौंह करि बांकी॥
खजन मंजु तिरीछे नयननि। निज पिय कहेउ तिनहिं सिय सैननि।

२ लिखत रही पिय चित्र तहँ, आवत लखि सखि आन।
चतुर तिया तिहि कर लिखे, फूलन के धनु बान॥

३ वेद नाम कहि अँगुरिन खंड अकास।
पठयो सूपनखाहिं लखन के पास॥

वेद=श्रुति, कान। अकास=नाक।

८९ लोकोक्ति

(Popular Saying)

लोक उक्ति कह नूति जम, तस प्रसंग के ठांव।
राजा करै सो न्याय है, पांसा परै सो दांव॥ यथा—

१ चलौ सखी उत जाइये, जहा बसै व्रजराज।
गोरस वेचत हरि मिलैं, एक पथ दो काज॥
२ कर्म प्रधान विश्व करि राखा। जो जस करै सो तस फल चाखा॥
३. महादेव अवगुण भवन, विष्णु सकल गुणधाम।
जिहि कर मन रम जाहि सन, ताहि ताहि सन काम॥
४ देव कहा हम तुमहिं गुसाईं। ईंधन पात कि रात मिताई॥

५ आरत कहहिं विचारन काऊ। सूझ जुवारिहिं आपन दाऊ॥
६ वृथा मरहु जनि गाल बजाई। मन मोदक नहिं भूख बुताई॥
७ सिय रघुबीर कि कानन योगू। कर्म प्रधान सत्य कह लोगू॥
८ भा विधना प्रतिकूल जबै, तब ऊंट चढ़े पर कूकर काटत।

प्रसंग वर्णन के साथही लोकोक्ति घटित करने से लोकोक्ति अलङ्कार होता है, केवल लोकोक्ति, अलंकार नहीं।

९० छेकोक्ति

(The Skilful Speech)

छेक उक्ति लोकोक्ति को, साभिप्राय बखान।
चोरी को गुड़ हे सखी, अति मीठो जिय जान॥

छेक=चतुर, उक्ति कथन साभिप्राय=मतलब के साथ, यथा—

१ सत्य सराहि कहेउ बर देना। जानेहु लेइहि मांग चबेना॥
२ खग जाने खगही की भाषा। तातें उमा गुप्त करि राखा॥
३ जानत एक भुजगही, सखि ! भुजंग के खोज॥

९१ वक्रोक्ति

(The Crooked Speech)

वक्र उक्ति स्वर श्लेष सों, अर्थ फेर जब होय।
रसिक अपूरब हो पिया, बुरो कहत नहिं कोय॥

वक्र=टेढ़ा, यथा—

१ मैं सुकुमारि नाथ बन योगू। तुमहिं उचित तप मो कहँ भोगू॥
२ भरत कि राउर पूत न होहीं। आनेहु मोल बिसाहि कि मोहीं॥
३ धर्मशीलता तव जग जागी। पावा दरस हमहुं बड़ भागी॥
४ मानि परी तुमहूं मधुरी बोलि बान के दानि कै।
गाँठ भीनी ॥

९२ स्वभावोक्ति

(Description of Nature)

(१) स्वभावोक्ति तहँ जानिये, जहँ स्वभाव कहि जाय।
फरकत फांदत फिरत फिर, तुव तुरंग रघुराय ॥

१ भोजन करत चपल चित, इत उत अवसर पाय।
भागि चलत किलकात मुख, दधि ओदन लपटाय॥ यथा–
२ कहहु स्वभाव न कुलहिं प्रशंसी॥कालहु डरहिं न रण रघुवंसी॥
३ रघुकुल रीति सदा चलि आई। प्राण जायँ बरु बचन न जाई॥
४ सत्य कहहु गिरि भव तनु एहा। हठन छूट छूटे बरु देहा ॥
५ सीस मुकुट कटि काछनी, कर मुरली उर माल।
यह बानिक मो मन वसौ, सदा बिहारी लाल ॥

(२) उक्ति प्रतिज्ञा बंध जहँ, भेद दूसरो आय।
अवसि इंद्रजित हतहुँ बरु, शत शंकरहु सहाययथा

१ तोरहुँ छत्रक दंड जिमि, तव प्रताप रघुनाथ।
जो न करहुँ प्रभु पद शपथ, पुनि न धरौं धनु हाथ ॥
२ शिव सकल्प कीन मन माहीं। यहि तन सती भेंट अब नाहीं ॥
३ जो शत शंकर करैं सहाई। तदपि हतौं रण राम दुहाई ॥

९३ भाविक

(The Vision)

भाविक भूत भविष्य को, परतिछ कहत बखान।
ऐसो भयो न होय गो, जैसो यह बलवान ॥

भाविक=भाव की रक्षा करने वाला, यथा—

१ भयउ न अहइ न अब हुनिहारा । भूप भरत जस पिता तुम्हारा ॥ (भूतप्रत्यक्ष)

२ जहँ मुनियन सग वास करि, चरित कीन अभिराम ।
चित्रकूट में जानिये, अबहू राजत राम ॥ (भूतप्रत्यक्ष)

३ जिन चलाइये चलन की, चरचा श्याम सुजान ।
मैं देखति हौं वाहि यह, बात सुनत बिन प्रान ॥ (भावीप्रत्यक्ष)

९४ उदात्त

(The Exalted)

है उदात्त महिमा कथन, जहँ उपलच्छित अन्य ।
राधा कृष्ण विहार थल, बंसी बट बट धन्य ॥

उदात्त=श्रेष्ठ, इसमें महिमा और संपत्ति की श्रेष्ठता अन्य को उपलक्षित करके कही जाती है, यथा—

१ जो संपदा नीच गृह सोहा । सो बिलोकि सुरनायक मोहा ॥

२ जेहि तिरहुत तेहि समय निहारी । तेहि लघु लाग भुवन दस चारी ॥

३ सो यह वृन्दावन जहां, रच्यो रास नँदलाल ।
मुरली मधुर बजाय के, मोही सब ब्रजबाल ॥

९५ अत्युक्ति

(Exaggeration)

अति उक्ती अतिशय कथन, दान सुजस बल रूप ।
याचक तेरे दान तें, भये कल्प तरु भूप ॥

अति+उक्ति=बढ़ाकर कहना, मुबालिग़ा, यथा—

१ [illegible] दान दीन भए काहू । [illegible]

२ देखि [illegible]

३ जासु त्रास डर कहँ डर होई ।

४ भूपण भार सँभारि है, क्यों वह तन सुकुमार ।
मूधे पांय न धरि सकत, महि शोभा के भार ॥

५ श्याम गौर किमि कहौं वखानी । गिरा अनयन नयन विनु बानी ॥ *

६ देव देखि तव बालक दोऊ । अव न आंख तर आवत कोऊ*

७ राम न सकहिं नाम गुण गाई ।

९६ निरुक्ति

(Exposition)

निरुक्ति नाम के योग तें, अर्थ प्रकल्पन आन ।
ऊधव कुब्जा वस भये, निर्गुण वहै निदान ॥

निर+उक्ति=वचन को जोड देना ।

हे ऊधव जो कुवजा के वश हुए वे निश्चय ही-निर्गुण हैं यहां निर्गुण का अर्थ सत रज तम रहित नहीं बरन अज्ञान हुआ, यथा-

१ नाम उदार प्रताप दिनेशा ।
(यहां भानु प्रताप को प्रताप दिनेशा कहा)

२ कनक कलित अहिवेलि वनाई । लखि नहिं परै सपर्न सुहाई
(यहा नागवेलि को अहिवेलि कहा)

३ दोप भरे इमि चरित तुव, तव दोपा कर नाम ।
(दोपा कर दोप का आकर और रात्रि करनेहारा चंद्र)

४ वृथा विरस वातें करति, लेति न हरि को नाम ।
यह न आचरज है कछू, रसना तेरो नाम ॥

५ छीनी छवि मृग मीन की, कहौ कहा की रीति ।
नामहिं में नहिं नीति का, करै नयन ये नीति ॥

* उभयालङ्कार देखो काव्यलिंग ।

६७ प्रतिषेध

(Prohibition)

सो प्रतिषेध प्रसिद्ध जो, अर्थ निषेध्यो जाय।
मोहन कर मुरली नहीं, है कछु बड़ी बलाय ॥

प्रतिषेध=रोकना, मना करना, यथा—

१ निपटहिं द्विज करि जानेसि मोही । मैं जस विप्र सुनावौं तोही ॥
२ कालनेम सम मैं नहीं, सुनहुं वीर हनुमान ।
३ सिय कंकण को छोरियो, धनुष तोरिबो नाहिं ।

६८ विधि

(Fitness)

विधि कहियत हैं सिद्धि जब, अर्थ साधिये फेर ।
कोकिल है कोकिल जबै, ऋतु में करहिं टेर ॥ यथा—

१ विश्व भरण पोषण कर जोई । ताकर नाम भरत अस होई ॥
२ जाके सुमिरन तें रिपु नासा । नाम शत्रुहन वेद प्रकासा ॥
३ मुरली मुरली होति है, मोहन के मुख लागि ।
४ दीन दयालु हमारो हरो दुख तो गुन दीनदयाल सराहौं ।

निरुक्ति में मन माना अर्थ कल्पित किया जाता है विधि सिद्धार्थ ही पुनः वही कहा जाता है ।

६९ हेतु

(The Cause)

(१) हेतु अलंकृत होय विधि, कारज कारन संग ।
उदित भयो शशि मानिनी, मान जान को अंग ॥

यथा—

१ अरुण उदय अवलोकहु ताता । पकज कोक लोक सुखदाता ।[१]
२ रघुकुल कमल सुजन सुखदाता । आये कुशल देव मुनि त्राता॥
३ राम सरूप निहारतही, उर मोद बढ्यो मिथिलेश लली के।

(२) कारण कारज ये जबै, लहत एकता पाय ।
मेरे ऋद्धि समृद्धि है, तुव दाया रघुराय ॥ यथा—

१ करि राख्यो निर धार यह, मैं लखि नारी ज्ञान ।
वही वैद्य औषधि वहै, वही जु रोग निदान ॥
२ सिया राम मय सब जग जानी । करौं प्रणाम जोरि जुग पानी[२]
३ परम पदारथ चारिहूं, श्री राधा गोविंद ।
४ कोऊ कोटिक संग्रहौ, कोऊ लाख हजार ।
मो सम्पति यदुपति सदा, विपति विदारनहार ॥

१०० प्रमाण
(The Just)

कहिये वचन प्रमाण जब, वेद शास्त्र युत होय ।
सत्य वचन सब ते भलो, बुरो कहत नहिं कोय ॥

इसके ८ भेद हैं :—

आठ भेद प्रत्यक्ष पुनि, अनुमानरु उपमान ।
शब्द अर्थापतिऽनुपलब्धि, संभव ऐतिह जान॥

१ प्रत्यक्ष

मन अरु इंद्रिय विषय जो, सो प्रत्यक्ष बखान ।
ज्ञान हीन कुलहीन जऊ, पूजत सब धनवान ॥

१ तात जनकतनया यह सोई । धनुष यज्ञ जिहि कारण होई ।

१ समासोक्ति में भी देखो—उभयालंकार । २ विशेष में भी देखो—उभयालंकार ।

२ अनुमान

कारण लखि अनुमान तें, कारज लीजे जान ।
धुवां देखि सब कोउ करत, आगी को अनुमान ॥

१ नाचि अचानक ही उठे, बिन पावस बन मोर ।
जानति हौं नंदित करी, यह दिशि नंद किशोर ॥
२ जिन लुखरी मारी नहीं, कहा मारिहैं शेर ।

३ उपमान

उपमा की समता लखे, उपमे जानो जाय ।
सागर सो गम्भीर जो, सो समर्थ रघुराय ॥

४ शब्द

शास्त्र लोक को वचन जो, सोई शब्द प्रमान ।
धर्म बिना नहिं सुखल है, गुरु बिन लहे न ज्ञान ॥

मरै सूम सरदार मरै वह कहर कटट्ट ।
मरै हठीली नारि मरै वह पुरुष निखट्ट ॥
आलस सो मरि जाय हाथ ले मदिरा प्यावै ।
पूत वही मरि जाय जु कुल में दाग लगावै ॥
बे निगाह राजा मरै नींद भराभर सोइये ।
बैताल कहैं विक्रम सुनौ इतने मरे न रोइये ॥

५ अर्थापत्ति

अर्थापत्ति में अर्थ को, जोग व्यर्थ है जान ।
जब हम बरजी ना तुम्हैं, तौ बरजी कहु कौन ॥

यह दोहा में पार्वती का शिव प्रति वचन है ।

६ अनुपलब्धि

जानि परै नहिं वस्तु कछु, अनुपलब्धि सो मान ।
राम तियहुं रावण हरी, है अदृष्ट बलवान ॥

अन=नहीं, उपलब्धि=प्राप्ति ।

७ संभव

जहँ संभव है वस्तु को, संभव सोइ कहाय ।
चार जने मिलि गहि सवै, मेरुहिं देत हिलाय ॥

संभव में किसी वस्तु का हो सकना माना जाता है संभावना में शर्त रहती है कि ऐसा होवे तो ऐसा हो सकता है ।

८ ऐतिह्य

ऐतिह कथा पुराण जो, ताही केर बखान ।
वलि द्वारे ठाढ़े अजहुँ, श्रीहरि ज्यों दरबान ॥

ऐतिह्य=ऐतिहासिक ।



उभयालंकार

भूषण इकतें अधिक जहँ, सो उभयालंकार।
संसृष्टिरु संकर तहां, उभय भेद निरधार॥

संसृष्टि

शब्दालंकार+शब्दालंकार

जुदे जुदे भासें सकल, अपनी अपनी ठाम।
तिल तंडुल की रीति सों, है संसृष्टि सुनाम॥ यथा—

करकी कनकी वर चुरी, धुर धुमरित देह।
कत मुरकत परसी परत, सुन सो मनों सनेह॥

यहां यमक और छेकानुप्रास की संसृष्टि है

अर्थालंकार+अर्थालंकार

शशि सों उज्ज्वल मुख लसे, खंजन हैं मनु नैन।
अधर नासिका बिम्ब शुक, मधुर सुधा से बैन॥

उपमा, उत्प्रेक्षा और यथासंख्य अलंकारों की संसृष्टि है।

शब्दालंकार+अर्थालंकार

दृग से दृग हैं याहि के, मुख सो सुन्दर ताहि।
कर से कर कटि सी कटी, उपमा उपजै चाहि॥

यहां छेकानुप्रास और उपमा की संसृष्टि है।

६ अनुपलब्धि

जानि परै नहिं वस्तु कछु, अनुपलब्धि सो मान
राम तियहुं रावण हरी, है अदृष्ट बलवान

अन=नहीं, उपलब्धि=प्राप्ति।

७ संभव

जहँ संभव है वस्तु को, संभव सोइ कहाय।
चार जने मिलि गहि सबै, मेरुहिं देत हिलाय

संभव में किसी वस्तु का हो सकना माना जाता
संभावना में शर्त रहती है कि ऐसा होवे तो ऐसा हो सकता

८ ऐतिह्य

ऐतिह कथा पुराण जो, ताही केर बखान।
बलि द्वारे ठाढ़े अजहुँ, श्रीहरि ज्यों दरबान

ऐतिह्य=ऐतिहासिक।



उभयालंकार

भूषण इकतें अधिक जहँ, सो उभयालंकार ।
संसृष्टिरु संकर तहां, उभय भेद निरधार ॥

संसृष्टि

शब्दालंकार+शब्दालंकार

जुदे जुदे भासे सकल, अपनी अपनी ठाम ।
तिल तंडुल की रीति सों, है संसृष्टि सुनाम ॥ यथा—

करकी कनकी घर चुगी, भृग धूसरित देह ।
कत मुरकत परसी पगत, सुच मों मनी सनेह ॥

यहां यमक और छेकानुप्रास की संसृष्टि है

अर्थालंकार+अर्थालंकार

शशि सों उज्ज्वल मुख लसे, खंजन हैं मनु नैन ।
अधर नासिका बिम्ब शुक, मधुर सुधा से बैन ॥

उपमा, उत्प्रेक्षा और यथासंख्य अलंकारों की संसृष्टि है ।

शब्दालंकार+अर्थालंकार

दृग से दृग हैं चाहि के, मुख सों सुरसी रासि ।
कर से कर कटि सी कटी, उपमा उपजै फासि ॥

यहां छेकानुप्रास और उपमा की संसृष्टि है ।

दोष कोष

अलंकारों के मुख्य२ दोप लिखे जाते हैं-यथासंभव उनसे बचना चाहिये ।

(शब्दालंकार के दोष)

१ प्रसिद्धाभाव

अप्रमान कह बात जो, अनुप्रास के हेत ।
दोष प्रसिद्ध अभाव तिहि, भाषें सुमिति निकेत॥यथा–

दगि जात दारिद दिनेस तनया के कहे,
कहत कलिंदी के कन्हैया होत देर विन ॥

२ वैफल्य

चमत्कार तो है नहीं, शब्दाडंबर मात्र ।
सो वैफल्य बखानिये, सुनि राखो सब छात्र॥ यथा–

का वलमा वलमा वलमा, वलमा वलमा वलमा वलमा है ।

३ वृत्तिविरोध

वृत्ति रचें प्रतिकूल जे, नियमनि को नहिं सोध।
रस में अनरस सम तिही, जानिय वृत्ति विरोध ॥ यथा–

उपटीकी टीकी प्रभाटीकी बधुटीकी,नाभिटीकी धूर्जटी की औ कुटीकी सपुटीकी है ।

यह श्रृंगार रस है उसमें कठोर वर्ण नहीं चाहिये उन्हीं का यहां बाहुल्य है ।

दोष कोष

अलंकारों के मुख्य२ दोष लिखे जाते हैं-यथासंभव उनसे बचना चाहिये।

(शब्दालंकार के दोष)

१ प्रसिद्धाभाव

अप्रमान कह बात जो, अनुप्रास के हेत ।
दोष प्रसिद्ध अभाव तिहि, भाषें सुमिति निकेत॥यथा-

दरि जात दारिद दिनेस तनया के कहे,
कहत कलिंदी के कन्हैया होत देर बिन ॥

२ वैफल्य

चमत्कार तो है नहीं, शब्दाडंबर मात्र ।
सो वैफल्य बखानिये, सुनि राखो सब छात्र॥ यथा-

का बलमा बलमा बलमा, बलमा बलमा बलमा बलमा है ।

३ वृत्तिविरोध

वृत्ति रचै प्रतिकूल जे, नियमनि को नहिं सोध।
रस में अनरस सम तिही, जानिय वृत्ति विरोध ॥ यथा-

उपटीकी टीकी प्रभाटीकी बधुटीकी नाभिटीकी धूर्जटी कं
औ कुटीकी सपुटीकी है ।

यह शृंगार रस है इसमें कठोर वर्ण नहीं चाहिये उन्है
का यहां बाहुल्य है ।

४ अप्रयुक्त

यमक होय इक चरण में, दो में वा पुनि चार।
अप्रयुक्त है तीन में, धरिये ताहि विचार ॥ यथा—

तोपर वारों उर वसी, सुन राधिके सुजान।
तू मोहन के उर वसी, ह्वै उर वसी समान ॥

(अर्थालंकार के दोष)

१ न्यूनता

उपमेय से उपमान की (जातिगत)

चतुर सखिन के मृदु वचन, वासरजाय विताय।
पै निशि मे चंडाल लौं मारत यह शशि जाय ॥

यहा चद्रमा की तुलना चाडाल से दी है यही जातिगत न्यूनता है।

उपमेय से उपमान की (प्रमाणगत)

सोहत अनल पतंग सम, यह रवि रथ नभ थान।

यहा रवि रथ की उपमा अग्नि की चिनगारी से है जो अत्यन्त छोटी है—यही प्रमाणगत न्यूनता है।

उपमेय से उपमान की (धर्मगत)

कृष्ण अजिन पट लसत मुनि, शुचि मौंजीयुत गात।
नील मेघ के निकट जिमि, नभ दिन मणि विलसात॥

इस दोहे में जिस प्रकार मुनि उपमेय के साथ काली मृगछाला और पवित्र मौंजी का वर्णन किया है उसी प्रकार

सूर्य उपमान के साथ केवल नीलमेघ धर्म का वर्णन किया है मौंजी के समान दूसरा धर्म विशुल्लता और कहना था सो नहीं कहा अतएव उपमान के धर्म की न्यूनता है।

२ अधिकता

उपमेय से उपमान की (जातिगत)

कमलासन आसीन यह, चक्रवाक विलसाहि।
चतुरानन जुग आदि में, प्रजा रचन जिमि आहि॥

यहां चक्रवाक उपमेय का ब्रह्मारूप उपमान देवजाति के होने से जातिगत अधिकता है।

उपमेय से उपमान की (प्रमाणगत)

दशनन वाके दिख परत, वज्र शिला अनुहार।

यहां दांत उपमेय की समता वज्रशिला से की गई यही प्रमाणगत अधिकता है।

उपमेय से उपमान की (धर्मगत)

लसत पीत पट चाप कर, मनहर वपु घनश्याम।
तड़ित इंद्र धनु शशि सहित, ज्यों निशि में घनश्याम।

यहां उपमेय श्रीकृष्ण का शंख धारण नहीं कहा गया उपमान नीलमेघ की रात्रि में बिजली इन्द्र धनुष तथा चंद्रमा सहित कथन किया यही धर्मगत अधिकता है।

३ व ४ उपमेय और उपमान के लिंग और वचन में भेद

कहे जायँ कहु कौन विधि, या नृप के गुन कूल।
मधुरे वच हैं दाख सों, चरित चांदनी तूल॥

उपमेय वचन पुल्लिंग और बहुवचन, उपमान दाख स्त्रीलिंग और एकवचन, तथा चरित पुल्लिंग बहुवचन, चादनी स्त्रीलिंग एकवचन, यही लिंग और वचन का दोष है।

५. कालभेद

रण में इमि शोभित भये, रामवाण चहुं ओर।
जिमि निदाघ मध्याह्न मे, नभ रविकर खर घोर॥

शोभित भये—भूतकाल, जिमि सूर्य किरणें मध्यान में होती हैं वर्तमान काल, अतएव अनुचित कालभेद।

६. पुरुषभेद

राजत हो प्यारी! रुचिर, पट कुसुंभ तन धारि।
लाल सुवाल प्रवाल तरु, प्रभवलता अनुहारि॥

उपमेय प्यारी (मध्यमपुरुष) उपमानलता (अन्यपुरुष) यही दोष है।

७ विधिभेद

नृप! तव कीरति मम सदा, दिनकर फेर प्रकाश।

सूर्य सर्वदा प्रकाशमान है कीर्ति के समान प्रकाशित नहीं यही विधिभेद है।

८ अप्रसिद्ध

काव्य चन्द्र रचना करत, अर्थ किरण जुत चारु।

काव्य को चन्द्र और अर्थ को किरण कहना अप्रसिद्ध दोष है।

९ असंभव

धनु मंडल सों परतु है, दीपत शर खर धार।
जिमि रवि के परवेश तें, परत ज्वलित जल धार॥

यहां धनुष से छूटे हुए दीप्त बाणों को सूर्य्य मंडल से गिरती हुई ज्वलित जलधाराओं की उपमा दी जाने से असंभव दोष है क्योंकि सूर्य्य मंडल से जलती हुई जलधाराओं का पतन असंभव है।



न्याय

काव्य शास्त्र के बोध में, परत न्याय को काम ।
सोधि भानु परगट कियो, लोक उक्ति अभिराम ॥

१ अजापुत्र

जोर चले नहिं सबल सो, अबलहि दीजे त्रास ।
अजापुत्र सो न्याय है, बरणन बुद्धि उजास ॥ यथा—

(१) 'अजा पुत्रं बलिं दद्यात्'। इसे यों पढ़ो अजा पुत्रन न्याय, ऐसेही लघु व्यञ्जनान में सर्वत्र जानो ।

(२) बल सों मन चेती करें, कोउ न आड़त पाग ।
न्याय सबल परतन्त्र है, राजा करै सो न्याय ॥
(इसको सबल न्याय भी कहते हैं)

२ अरण्य रोदन

जाकी जवै गुहार, रहत बहुत में अनसुनी ।
हो उद्योग असार, है अरण्य रोदन स्वई ॥ यथा—

को नगारखाने सुने तूती की आवाज ।

३ अरुन्धती

सूक्ष्म वस्तु बोधार्थ जहँ, क्रमतें थूल बतात ।
गुरुजन ताही कहत हैं, न्याय अरुन्धति तात ॥ यथा—

अथ निरूपणार्थ प्रथम इस भाव का दूर करना यथा नक्षत्रों का विचार तदुपरान्त और महर्षि आदि के बोध होने के अनन्तर सूक्ष्म अरुन्धती की प्राप्ति कराना ।

४ अंधकवर्तिकीय

अंधक वर्तक वस्तु जहँ, अकस्मात मिलि जाय।
अंधे हांथ वटेर ज्यों, लागी हिय हरषाय॥

५ अंधगज

जहँ निज निज अनुमान, वस्तु अदेखी वरणिये।
वरणत सबे सुजान, अंध गजहि सो न्याय है॥यथा-

अन्धों ने हाथी का जो जो अंग टटोला हाथी का रूप वैसाही बताया।

६ अंधादर्पण

मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलैं विरंचि सम।
वरणत बुद्धि निकेत, अंधा दर्पण न्याय स्वइ॥

इसी को ऊपरदृष्टि न्याय कहते है।

७ अंध परम्परा

चाल पुरानी पर चले, मर्म न जाने कोय।
सोई अंध परम्परा, भाषत हैं कवि लोय॥

सू०-यदि मर्म जाने तो अंधपरम्परा नहीं।

८ कदलीफल

सूधी बातन तें जहां, कारज निकसे नाहि।
कदली फल सो न्याय है, नीच निसानी आहि॥

९ काकतालीय

होनी माहीं निमित कछु, अकस्मात लगि जाय ।
न्याय काकतालीय त्यहि, वरणत कवि समुदाय ॥

ताड़ वृक्ष के नीचे से उड़ते हुए कौए पर अकस्मात् ताड फल का टूट गिरना और उससे कौए की मृत्यु होना जैसे वह पुरुष मारनेही को था अकस्मात किसी का धक्का लगने से निष्प्राण हो गया ।

१० कूपमण्डूक

घर तजि बाहर की खबर, जाहि न रहत कछूक ।
अल्प ज्ञान के कारणे, न्याय कूप मण्डूक ॥

११ कूर्म्मांग

जाको जो विस्तार है, ताहीं माहिं समाय ।
नष्ट नहीं अदृष्ट ह्वै, कूर्म्मांग है न्याय ॥

१२ कैमुतिक

सिंह हन्यो निज बाहु बल, कहा स्यार की बात ।
जहां होत कह नूति अस, सो कैमुतिक कहात ॥

जाहि सकत हनि स्यार तो, कहा सिंह की बात ।
जहां होत कहनूति अस, न्याउ कैमुतिक कहात ॥

१३ कौण्डिन्य

नीको है यदि होत यह, औरहु नीको होत ।
सो कौण्डिन्य न्याय है, वरणत सनि कवि गोत ॥

४ अंधकवर्तिकीय

अंधक वर्तक वस्तु जहँ, अकस्मात मिलि जाय।
अंधे हांथ बटेर ज्यों, लागी हिय हरषाय॥

५ अंधगज

जहँ निज निज अनुमान, वस्तु अदेखी बरणिये।
बरणत सबै सुजान, अंध गजहि सो न्याय है॥यथा—

अंधों ने हाथी का जो जो अंग टटोला हाथी का रूप वैसाही बताया।

६ अंधादर्पण

मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलैं विरंचि सम।
बरणत बुद्धि निकेत, अंधा दर्पण न्याय स्वइ॥

इसी को ऊपरदृष्टि न्याय कहते है।

७ अंध परम्परा

चाल पुरानी पर चलै, मर्म न जाने कोय।
सोई अंध परम्परा, भाषत हैं कवि लोय॥

सू०—यदि मर्म जाने तो अंधपरम्परा नहीं।

८ कदलीफल

सूधी बातन तें जहां, कारज निकसे नाहि।
कदली फल सो न्याय है, नीच निसानी आहि॥

९ काकतालीय

होनी माहीं निमित कछु, अकस्मात लगि जाय ।
न्याय काकतालीय त्यहि, वरणत कवि समुदाय ॥

ताड़ वृक्ष के नीचे से उड़ते हुए कौए पर अकस्मात् ताड़ फल का टूट गिरना और उससे कौए की मृत्यु होना जैसे यह पुरुष मरनेही को था अकस्मात किसी का धक्का लगने से निष्प्राण हो गया ।

१० कूपमण्डूक

घर तजि बाहर की खबर, जाहि न रहत कछूक ।
अल्प ज्ञान के कारणे, न्याय कूप मण्डूक ॥

११ कूर्म्मांग

जाको जो विस्तार है, ताहीं माहिं समाय ।
नष्ट नहीं अदृष्ट ह्वै, कूर्म्मांग है न्याय ॥

१२ कैमुतिक

सिंह हन्यो निज बाहु बल, कहा स्यार की बात ।
जहां होत कहू नृति अस, सो कैमुतिक कहात ॥

जाहि मयन हनि स्यार लौं, कहा सिंह की बात ।
जहा होत कन्नूति अस, स्रम कैमुतिक कहात ॥

१३ कौण्डिन्य

नीको है यदि होन कछु, छोड़हु नीको होन ।
सो कौण्डिन्य न्याय है, बरनत महि कवि गोन ॥

१४ गड्डुरिका प्रवाह

एक चले सब चालि परत, नहिं कछु ठीक ठिकान।
सो गड्डुरी प्रवाह जिहिं, कहियत भेड़ धसान॥

१५ गणपति

जहँ थोड़ीसी युक्ति सों, साधत कार्य्य महान।
सोई गणपति न्याय है, बरणत बुद्धि निदान॥

जैसे गणपतिजी पृथ्वी में राम नाम लिखकर उसकी प्रदक्षिणा करके प्रथम पूजनीय हुए।

१६ घटप्रदीप

चहै भलाई आपनी, कबहुं न पर उपकार।
घट प्रदीप सो न्याय है, बरणत बुद्धि उदार॥

१७ घुणात्तर

कछू करत कछु योग सों, चित्र कछू बनि जाय।
सोई कवि जन के मते, होत घुणाक्षर न्याय॥

१८ चंद्र चंद्रिका

जाको गुण जब जाहि सों, कबहुं जुदो नहिं होय।
भली भांति लखि लीजिये, चंद्र चंद्रिका सोय॥

इसको दिन-दिन पति न्याय भी कहते है।

१९ जल तरंग

जब जाही को रूप कछु, बिलग न तासों होय।
शब्द मात्र की भिन्नता, जल तरग है सोय॥

२० जल तुम्बिका

केतो गोपन कीजिये, तऊ प्रगट हो जाय ।
सोइ न्याय जल तुंबिका, कहत सकल कविराय ॥

२१ तिल तण्डुल

मिले परस्पर हू जहां, वस्तु जुदी लखाय ।
तिल तण्डुल सों न्याय है, बरणत बुद्धि निकाय ॥

२२ दंड चक्र

जहां एक बिन एक को, सरत नाहि जब काज ।
दंड चक्र है न्याय तहें, भाषत कवि सिरताज ॥

२३ दंडपूपिका

नष्ट भये अवलंब के, अवलंबित को नास ।
कुत्ता लाठी ले गयो, बँधी पुरी कह आस ॥

(दंड=लाठी, पूपिका=पुरी)

२४ देहलीदीपक

देहरी दीपक न्याय स्पष्ट, घर बाहिर उजियार ।
राम नाम मणि दीप धरु, जीह देहरी द्वार ॥

२५ नृसिंह

आधो लोगनि नर है, आधो सीगनि हर ।
सो नरसिंह न्याय है, बरनत सब कवि सूर ॥

२६ पिष्टपेषण

सिद्ध वस्तु की सिद्धि को, वृथा जतन जहँ ठान ।
कहत पिष्ट पेषणत्यही, कवि जन बुद्धि निदान ॥

२७ पंग्वन्ध (पंगु अंध)

जहां निबल द्वै करत हैं, इक की एक सहाय ।
बुध जन ताही कहत हैं, अन्धा पंगू न्याय ॥

इसे हृदनक्र न्याय भी कहते हैं ।

२८ बीजांकुर

दो मे पहिलो कौन है, ठीक न जानो जाय ।
इक को कारण एक जहँ, सो बीजांकुर न्याय॥

२९ मण्डूकप्लुति

विषय चलत औरै कछू, औरै कछु बतरात ।
मण्डूकप्लुति न्याय सो, कहत सुमति अवदात॥

३० यक्ष वृक्ष

देखी है नहिं काहुने, सुनी एक तें एक ।
यक्ष वृक्ष सो न्याय है, भाषत कवि सविवेक ॥

जैसे—भाई इस वृक्ष में एक प्रेत है, प्रश्न क्या तुमने ? उत्तर देखा तो नहीं हमारे काका कहते थे काका से तो उन्होंने कहा हमारे बाबा कहते थे, ऐसेही और

३१ रात्रिदिवस

जब यह है तो वह नहीं, जहां होत निरधार ।
रात्रि दिवस सो न्याय है, भाषत सुकवि विचार ॥

३२ वृद्ध कुमारी वाक्य

जहँ थोरीसी बात में, मांग लेत बहु दान ।
वृद्ध कुमारी वाक्य त्यहि, बरणत सबै सुजान ॥

एक ब्रती तपस्विनी वृद्ध कुमारी पर देव प्रसन्न हुए कहा, एकही वरदान मांगो वृद्धा ने कहा केवल इतनाही मांगती हूं कि मैं अपने नाती के पतों को सोने के थाली (थाल) में खाते हुए-देखूं ।

३३ सुन्दोपसुन्दन

प्रबल रिपुन को परस्पर, होत जहां पर नाश ।
सुन्द उपसुन्दन न्याय तहँ, बरणत कवि सहुलास ॥

३४ सूची कटाह

अल्प अधिक के पूर्वही, जहँ निपटायो जाय ।
सूचि कटाह न्याय तहँ, भाषत कवि समुदाय ॥

सूची सुई, कटाह=कड़ाह, जैसे परीक्षा में [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है ।

२६ पिष्टपेषण

सिद्ध वस्तु की सिद्धि को, वृथा जतन जहँ ठान ।
कहत पिष्ट पेषणत्यही, कवि जन बुद्धि निदान ॥

२७ पंगवन्ध (पंगु अंध)

जहां निबल द्वै करत हैं, इक की एक सहाय ।
बुध जन ताही कहत हैं, अन्धा पंगू न्याय ॥

इसे हृदनक्र न्याय भी कहते हैं ।

२८ बीजांकुर

दो में पहिलो कौन है, ठीक न जानो जाय ।
इक को कारण एक जहँ, सो बीजांकुर न्याय॥

२९ मण्डूकप्लुति

विषय चलत औरै कछू, औरै कछु बतरात ।
मण्डूकप्लुति न्याय सो, कहत सुमति अवदात ॥

३० यक्ष वृक्ष

देखी है नहि काहुने, सुनी एक तें एक ।
यक्ष वृक्ष सो न्याय है, भाषत कवि सविवेक ॥

जैसे—भाई इस वृक्ष में एक भेत है, प्रश्न क्या तुमने देखा है? उत्तर देखा तो नहीं हमारे काका कहते थे काका से पूछा गया तो उन्होंने कहा हमारे बाबा कहते थे, ऐसेही और भी जानो ।

३१ रात्रिदिवस

जब यह है तौ वह नहीं, जहां होत निरधार।
रात्रि दिवस सो न्याय है, भाषत सुकवि विचार॥

३२ वृद्ध कुमारी वाक्य

जहँ थोरीसी बात में, मांग लेत बहु दान।
वृद्ध कुमारी वाक्य त्यहि, बरणत सब सुजान॥

एक अंधी तपस्विनी वृद्ध कुमारी पर देव प्रसन्न हुए, कहा, एकही वरदान मांगो वृद्धा ने कहा केवल इतनाही। मांगती हूं कि मैं अपने नाती के पोतों को सोने के थाली (पात्र) में खाते हुए देखूं।

३३ सुन्दोपसुन्दन

प्रबल रिपुन को परस्पर, होत जहां पर नास।
सुन्द उपसुन्दन न्याय तहँ, बरणत कवि सहुलास॥

३४ सूची कटाह

अल्प अधिक के पूर्वही, जहँ निपटाये जाय।
सूचि कटाह न्याय ताँ, भाषत कवि समुदाय॥

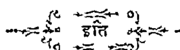
सूची: सुई, कटाह-कड़ाह, और बनाने में शीघ्र है कि पहिले सुगम काम निपटाके पश्चात् कठिन में हाथ लगाते हैं।

३५ स्थालीपुलाक

हांडी में को एक कण, लखत होय अनुमान ।
सोई थाल पुलाक है, भाषत सुमति निधान ॥

३६ क्षीर नीर

और वस्तु जब और में, मिलि तन्मय हो जाय ।
पृथक् करण तिन कर सरस, क्षीर नीर है न्याय ॥





अथ अलङ्कार दर्पण ।

शब्दालङ्कार

गुरु पद पद्महिं नाय सिर, सुमिरि शारदा माय ।
अलंकार दर्पण सजत, 'भानु' भेद बिलगाय ॥
लच्छण लच्छहिं कहउँ सब, थोरेही संकेत ।
गद्य पद्य में अति सुगम, शीघ्र बोध के हेत ॥
कहत सुनत समुझत ललित, बुद्धि बढ़ावनहार ।
शोभा कर अति काव्य को, अलंकार सुविचार ॥
यदपि सुजाति सुलच्छनी, सुबरण सरस सुवित्त ।
भूषण बिन न बिराजई, कविता बनिता मित्त ॥
छेक वृत्ति श्रुति लाट में, व्यंजन ही को सार ।
अंत्यानुप्रासहिं करिय, स्वर को अंत विचार ॥

[illegible]

नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
छेकानुप्रास	एक वा अनेक व्यंजनों की आवृत्ति एकही बार हो, स्वर मिलें वा न मिलें ।	दास दुखी मिसरी मुरी
वृत्त्यनुप्रास	एक वा अनेक व्यंजनों की आवृत्ति कई बार हो, स्वर मिलें वा न मिलें ।	धर्म धुरीण धीर नय-नागर ।
श्रुत्यनुप्रास	तालु कंठादि व्यंजनों की समता हो, स्वर मिलें वा न मिलें ।	जयति द्वारिका धीश, जय संतन संतापहर ।
लाटानुप्रास	पदावृत्ति में केवल तात्पर्य्य का भेद ।	पीय निकट जाके नहीं, घाम चांदनी ताहि । पीय निकट जाके नहीं, घाम चांदनी ताहि ॥
अन्त्यानुप्रास	तुकांत ।	हरि भजहु, सब तजहु ।
यमक	वही शब्द फिर हो परन्तु अर्थ दूसरा हो ।	भये विदेह विदेह विसेखी ।
भाषा समक	मिश्रित भाषा ।	यदा मुरारी कर्फटे या कमाने ।

अर्थालंकार वर्णन के पूर्व्व उपमाओं के कुछ भेद नीचे लिखते हैं —

मुख जैसा मुखही है	अनन्वय (२)
मुखसा चन्द्र, चन्द्रसा मुख	उपमानोपमेय (उपमेयोपमा) (३)
मुखसा चन्द्रमा है	प्रतीप (४)
मुखही चन्द्रमा है	रूपक (५)
क्या यह मुख है वा चन्द्रमा ?	संदेह (१०)
मुख नहीं चन्द्रमा है	अपह्नुति (११)
मुख मानो चन्द्रमा है	उत्प्रेक्षा (१२)
मुख शोभायमानहै चन्द्रभी तो प्रकाशमानहै	प्रतिवस्तूपमा (१६)

अलङ्कार दर्पण (अर्थालङ्कार)

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
१	पूर्णोपमा	उपमान, उपमेय, वाचक, धर्म	[illegible]
	लुप्तोपमा	उपरोक्त में एक दो या तीन कम	[illegible]
	मालोपमा	उपमेय की उपमा कई प्रकार	[illegible]
	रसनोपमा	उपमेय उपमान होता जाय	[illegible]
२	अनन्वय	जिसकी उपमा उसी से दी जाय	[illegible]
३	उपमानोपमेय	परस्पर उपमा	[illegible]
४	प्रतीप	उपमेय की समान उपमा कही जाय	[illegible]
५	रूपक	उपमेय ही उपमान है।	[illegible]
६	परिणाम	उपमान ही उपमेय की क्रिया करे	[illegible]
७	उल्लेख	(१) एक को अनेक प्रकार से जाने (२) एक का गुण अनेक [illegible]	[illegible]
८	[illegible]	[illegible]	[illegible]
९	[illegible]	[illegible]	[illegible]
१०	[illegible]	[illegible]	[illegible]

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
११	शुद्धापह्नुति	सच्ची बात छिपाई जाय	यह मुख नहीं कमल है
	कैतवापह्नुति	किसी मिस से बात छिपावै	आप के भेजने के मिस से राम ने मुझे बड़ाई दी है
	हेत्वपह्नुति	किसी हेतु से बात छिपावै	यह तीव्र है अतएव चद्र नहीं, रात्रि है अतएव रवि नहीं
	पर्यस्ता-पह्नुति	एक का धर्म दूसरे मे आरोपण करे	यह चद्र का प्रकाश नहीं मुख चद्र का प्रकाश है
	भ्रांतापह्नुति	सत्य कहने मे पूछनेवाले का भ्रम दूर हो	हे सखी क्या कप ज्वर का ताप है ? नहीं सखी मदन सताता है
	छेकापह्नुति	युक्ति कर दूसरे से बात छिपावे	अर्द्ध निशा वह आयो भौन, सुदरता बरनै कवि कौन, निरखत ही मन भयो अनद, क्यों सखि सजन? ना सखि चद
१२	उत्प्रेक्षा	जो नहीं है उसे मान लेना	श्रवन समीप भये सित केसा, मनहु जरठ पन अस उपदेसा
१३	अतिशयोक्ति वा रूपकाति-शयोक्ति	केवल उपमान ही का कथन हो	कनकलता पर चद्रमा, धरै धनुष द्वै बान
	सापह्नवाति-शयोक्ति	रूपकातिशयोक्ति छिपी हो	अहि शशि मडल पै लसै, जिय पताल जिन जान
	भेदकाति-शयोक्ति	इसकी कुछ बात ही और है	औरै हँसिबो बोलिबो, औरै याकी बान
	सम्बन्धाति-शयोक्ति	अयोग्य को योग्य ठहराना	वा पुर के मन्दिर कहैं, शशि लौं ऊचे लोग
	असम्बन्धाति-शयोक्ति	योग्य को अयोग्य ठहराना	सो न सकहिं कहि कल्प शत, सहस शारदा सेस
	चपलाति-शयोक्ति	हेतु सुनतेही कार्य्य हो	विमल कथा कर कीन अरंभा, सुनत नसाय मोह मद दंभा

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
	अत्यंतातिशयोक्ति	हेतु के पूर्वही कार्य हो	प्रथम उमाड्यो आय हरि, पुनि टेर्यो गजराज
१४	तुल्ययोगिता	(१) वर्ण्य वर्ण्य का या अवर्ण्य अवर्ण्य का एक धर्म	[illegible]
		(२) शत्रु मित्र पर एक सम व्यवहार	[illegible]
		(३) अनेकों के गुण गण तुल्य कर एक ही ठौर कहना	[illegible]
१५	दीपक	वर्ण्य अवर्ण्य का धर्म एक साथ	[illegible]
१६	कारक दीपक	एक में क्रम से अनेक भाव	[illegible]
१७	आवृत्ति दीपक	पद की आवृत्ति	[illegible]
		अर्थ की आवृत्ति	[illegible]
		पद और अर्थ दोनों की आवृत्ति	[illegible]
१८	[illegible]	[illegible]	[illegible]
१९	प्रतिवस्तूपमा	[illegible]	[illegible]
२०	[illegible]	[illegible]	[illegible]

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
२१	निदर्शना	(१) दोनो वाक्यो में एक अर्थ की आरोपणा	मीठे वचन उदार के सोने माहि सुगंध
		(२) और ठौर के धर्म को और ठौर आरोप	प्रिय मुख शशि मे नयन चकोर
		(३) अपनी अवस्था से दूसरों को उपदेश	धन्यो ताहि नहिं छाडिये, कहत धराधर शेष
२२	व्यतिरेक	उपमा से उपमेय मे कोई बात विशेष	मुख है अम्बुज सो सखी, मीठी बात विशेष
२३	सहोक्ति	सह शब्दार्थ युक्त मनोहर युक्ति	नाक पिनाकहि सग सिधाई
२४	विनोक्ति	विन शब्द युक्त मनोहर युक्ति	वदन सून कविता विना, सदन सुवनिता हीन
२५	समासोक्ति	प्रस्तुत वर्णन से अप्रस्तुत फुर हो	सूर समर करनी करहि, कहि न जनावहिं आप
२६	परिकर	विशेषण आशय सहित हो	हिम कर वदनी नायिका, ताप हरति है जोय
२७	परिकरांकुर	विशेष्य आशयसहित हो	वदन मयंक ताप त्रय मोचन
२८	श्लेष	एक वाक्य मे अनेक अर्थ	होय न पूरन नेह विन, ऐसो प्रगट उदोत
२९	अप्रस्तुत प्रशंसा	अप्रस्तुत के वर्णन से प्रस्तुत का गुण प्रगट हो	राज हंस विन को करै, छीर नीर को दोय
३०	प्रस्तुतांकुर	प्रस्तुत में उपालम्भ	कहा गयो अलि केतकी, छांडि सुकोमल जाय
३१	पर्य्यायोक्ति	(१) व्यंग से रसाल उक्ति	चतुर वहै जो तुव गरे, विन गुन डारी माल
		(२) मिस करि कार्य्य साधन	लखन हृदय लालसा विसेखी जाय जनकपुर आइय देखी
३२	व्याजस्तुति	किसी बहाने किसी की स्तुति निंदा	स्वर्ग चढ़ाये पतित लौं, गंग कहा कछु तोय

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
३३	आक्षेप	प्रतिषेध-निषेध	[illegible]
३४	विरोधाभास	विरोध का आभास हो	या मुख चन्द्र प्रकाश, [illegible]
३५	विभावना	(१) हेतु बिना कार्य हो	[illegible]
		(२) अपूर्ण हेतु से कार्य पूर्ण हो	काम कुसुम धनु सायक लीन्हे सकल भुवन अपने बस कीन्हे
		(३) प्रतिबन्ध के होते भी कार्य पूर्ण हो	[illegible]
		(४) अकारण वस्तु से कार्य प्रगट हो	[illegible]
		(५) कारण से कार्य विरुद्ध हो	[illegible]
		(६) कार्य से कारण प्रगट हो	[illegible]
३६	विशेषोक्ति	हेतु रहते कार्य न हो	[illegible]
३७	असम्भव	[illegible]	[illegible]
३८	असंगति	(१) हेतु और कार्य में [illegible]	[illegible]
		(२) [illegible]	[illegible]
		(३) [illegible]	[illegible]
३९	विषम	(१) [illegible]	[illegible]

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
		(२) कारण का और रंग कार्य्य का और रंग	ज्यों२ बूड़े श्याम रंग, त्यों२ उज्ज्वल होय
		(३) भला उद्यम करते बुरा फल हो	भले कहत दुख रौरेहु लागा
		(४) बुरा उद्यम करते भला फल हो	कालकूट फल दीन अमी के
८०	सम	(१) यथायोग्य का संग	जस दूलह तस बनी बराता
		(२) कारण के अंग कार्य्य में दिख पड़ें	नीच संग अचरज कहा, लछमी जलजा आहि
		(३) उद्यम करतेही बिना विघ्न कार्य्य हो	छुवतहि टूट पिनाक पुराना
८१	विचित्र	इच्छा फलार्थ उलटा प्रयत्न	नमत उच्चता लहन को, जेहि पुरुष सचेत
८२	अधिक	आधार वा आधेय की कमी बढ़ी	अधिक सनेह समात न गाता
८३	अल्प	अल्पता रमणीय हो	रोम रोम प्रति राजही, कोटि२ ब्रह्मन्ड
८४	अन्योन्य	एक से दूसरे का उपकार	निशिहीं सों ससि सार, ससि सों निसि नीकी लगै
८५	विशेष	(१) आधेय अनाधार	नभ ऊपर कंचन लता, कुसुम महा छवि देय
		(२) थोड़े आरम्भ से विशेष फल, थोड़े का बहुत मानना	कपि-तन दरस सकल दुख बीते
		(३) एक वस्तु का वर्णन अनेक ठौर करना	निज प्रभु मय देखहिं जगत कासन करहिं विरोध
८६	व्याघात	(१) और से और ही कार्य्य हो	बिछुरत एक प्राण हरि लेहीं

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
		(२) विरोधी से अपना कार्य साधना	[illegible] रहत जानिये प्रान
४७	कारणमाला	कारण कार्य परम्परा	धर्मैं निति, निनि ते ज्ञान
४८	मालादीपक	दीपक+एकावलि, उत्तर प्रति उपकार	रन सों काव्य [illegible] सोभा पावत अपार
४९	सार	एक से एक बढ़कर	मधु सों मधुरी है सुधा, [illegible] सों शुभ काव्य
५०	यथासंख्य	वर्णन में वस्तु अनुक्रम क्रम	[illegible]
५१	पर्याय	अनेक एक स्थल पर या एक अनेक स्थल पर आश्रय ले	[illegible] भई [illegible]
५२	परिवृत्ति	लेना देना सम कार्य हो	[illegible]
५३	परिसंख्या	एक स्थान में वर्जित कर दूसरे स्थान में स्थापना	[illegible]
५४	विकल्प	या तो यह या यह	[illegible]
५५	[illegible]	(१) [illegible]	[illegible]
		(२) [illegible]	[illegible]
५६	[illegible]	[illegible]	[illegible]
५७	[illegible]	[illegible]	[illegible]
५८	[illegible]	[illegible]	[illegible]

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
		(२) कारण का और रग कार्य्य का और रग	ज्यों२ बूड़ै श्याम रग, त्यों२ उज्ज्वल होय
		(३) भला उद्यम करते बुरा फल हो	भले कहत दुख रौरेहु लागा
		(४) बुरा उद्यम करते भला फल हो	कालकूट फल दीन अमी के
४०	सम	(१) यथायोग्य का संग	जस दूलह तस बनी बराता
		(२) कारण के अग कार्य्य में दिख पड़ें	नीच सग अचरज कहा, लछमी जलजा आहि
		(३) उद्यम करतेही विना विघ्न कार्य्य हो	छुवतहि टूट पिनाक पुराना
४१	विचित्र	इच्छा फलार्थ उलटा प्रयत्न	नमत उच्चता लहन को, जेहैं पुरुष सचेत
४२	अधिक	आधार वा आधेय की कमी वढी	अधिक सनेह समात न गाता
४३	अल्प	अल्पता रमणीय हो	रोम रोम प्रति राजहीं, कोटिर ब्रह्मन्ड
४४	अन्योन्य	एक से दूसरे का उपकार	निशिहीं सों ससि सार, ससि सों निसि नीकी लगै
४५	विशेष	(१) आधेय अनाधार	नभ ऊपर कचन लता, कुसुम महा छवि देय
		(२) थोड़े आरम से विशेष फल, थोड़े का वहुत मानना	कपि-तव दरस सकल दुख वीते
		(३) एक वस्तु का वर्णन अनेक ठौर करना	निज प्रभु मय देखहिं जगत कामन करहिं विरोध
४६	व्याघात	(१) और से और ही कार्य्य हो	विद्युत्त एक प्राण हरि लेहीं

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
७०	अवज्ञा	(१) एक के गुणदोष को दूसरा न गहै	ऊपर बरसै [illegible] नहिं [illegible]
		(२) तिरस्कार	जो [illegible] जरि जाऊ, जहँ न राम [illegible]
७१	लेश	दोष में गुण और गुण में दोष लखे	[illegible]
७२	मुद्रा	छाप या मोहर के समान दूसरा भी अर्थ हो	[illegible]
७३	रत्नावलि	प्रस्तुत अर्थ में क्रम से और भी नाम	[illegible] चतुर्भुज [illegible], [illegible]
७४	तद्गुण	अपना गुण तजि संगति का गुण लेय	[illegible]
७५	पूर्वरूप	(१) संगका गुण लेकर फिर अपना फिर प्रगट करे	[illegible]
			[illegible]
		(२) [illegible] गुण न मिटै	[illegible]
७६	[illegible]	[illegible] गुण [illegible],	[illegible]

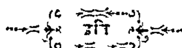
संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
५९	काव्यलिंग	युक्ति से अर्थ समर्थन	सो नर क्यों दशकंध, बालि बध्यो जिहि एक शर
६०	अर्थांतरन्यास	सामान्य विशेष से वा विशेष सामान्य से दृढ़ता	नृप कर पात पलाश, पहुँचत है सँग पान के
६१	विकस्वर	विशेष फिर सामान्य फिर विशेष कथन से दृढ़ता	हरि गिरि धार्यो सत पुरुष, भार सहैं ज्यों शेष
६२	प्रौढ़ोक्ति	अहेतु को हेतु मानकर उत्कर्ष कथन	जमुना तीर तमाल से, तेरे बाल असेत
६३	संभावना	यों होवे ता यों होय	लहतो गुणनि अपार, वक्ता हो तो शेष जो
६४	मिथ्याध्यवसिति	असत्य कथन असत्य रीति से	वारि मथे घृत होय बरु, सिकताते बरु तेल
६५	ललित	प्रस्तुत का प्रतिबिंब भाव से कथन	सेतु-बाधि करिहौ कहा, उतरि गयो अब अंबु
६६	प्रहर्षण	(१) यत्न बिना वांछित फल मिलै	नाथ सकल साधन मैं हीना कीनी कृपा जानि जन दीना
		(२) बिना श्रम वांछित से भी अधिक फल प्राप्ति	बरद धीर ह्वैहैं सुत चारी
		(३) वस्तु के यत्न को शोधतेही वस्तु प्राप्ति	यह बिधि मन विचार करि राजा, आय गये कपि सहित समाजा
६७	विषाद	चित चाह से उलटा होना	राज्य देन कहि दीन बन
६८	उल्लास	एक का गुण अवगुण दूसरा धरै	न्हाय संत पावन करैं, गंग धरै यह आन
६९	अनुज्ञा	चाह से दोष को गुण ठहराना	गौतम शाप परम हित माना

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
७०	अवज्ञा	(१) एक के गुणदोष को दूसरा न गहै	ऊसर बरसे तृण नहिं जामा
		(२) तिरस्कार	सो गुण धर्म कर्म जरि जाऊ जहँ न राम पद पंकज भाऊ
७१	लेश	दोष में गुण और गुण में दोष लखै	काग करत विधना दिना पान पीते चोंच
७२	मुद्रा	छाप या मोहर के समान दूसरा भी अर्थ हो	भागि न गया जौं फगुवा
७३	रत्नावलि	प्रस्तुत अर्थ में क्रम से और भी नाम	[illegible]
७४	तद्गुण	अपना गुण तजि संगति का गुण लेय	बेसर मोती अधर मिलि, पद्म राग छबि देय
७५	पूर्वरूप	(१) संगत गुण लेकर छूटि और अपना फिर प्राप्त करे	१ [illegible]
			२ [illegible]
		(२) नाश करने पर भी गुण न मिटै	[illegible]
७६	अतद्गुण	संगति से गुण न लेवै,	[illegible]
७७	अनुगुण	संगति से गुण और बढ़ै	[illegible]
७८	मीलित	[illegible]	[illegible]

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
७९	सामान्य	भेद रहते हुए भी सादृश्य में विशेषता न जान पड़े	एक रूप तुम भ्राता दोऊ
८०	उन्मीलित	सादृश्य से हेतु भेद	कीरति आगे तुहिन गिरि छुए परत है जान
८१	विशेषक	जो परीक्षा द्वारा सिद्ध हो	जाने तिय मुख अरु कमल शशि दर्शन ते साँझ
८२	गू़ढोत्तर	(१) कुछ भाव सहित उत्तर देना	कह दशकंठ कवन तै बंदर, मैं रघुबीर दूत दशकंधर
		(२) चित्रोत्तर-प्रश्नोत्तर एकही पद में	का वर्षा जब कृषी सुखाने
		(३) अनेक प्रश्न का एक ही उत्तर	वारि वताय विहारि मृग, सरन नवेली नार
		अर्थ प्रहेलिका	बावी वाकी जल भरी, ऊपर वारी आग। जबै वजाई बाँसुरी, निकस्यो कारो नाग
८३	सूक्ष्म	पर आशय देख क्रिया से भाव जतावे	सीतहि सभय देखि रघुराई, कहा अनुज सन सैन बुझाई
८४	पिहित	छिपी बात को भाव से जताना	जोरि पाणि प्रभु कीन प्रणाम पिता समेत लीन निज नाम
८५	व्याजोक्ति	प्रगट वस्तु का रूपट से गोपन करना	सखि शुक काटे अधर ये, दतनि जानि अनार
८६	गू़ढोक्ति	और के मिस से और से बात करना	पुनि आउब यहि बिरिया काली, अस कहि मन विहँसी इक आली
८७	विवृतोक्ति	छिपा श्लेष प्रगट करना	कहत जताये सैन, छुप भागा पर खेत ते
८८	युक्ति	क्रिया द्वारा मर्म छिपाना	पीय चलत आलि चलै, पोंछत नैन जँभात

संख्या	नाम	लक्षण	उदाहरण
८९	लोकोक्ति	कहावत का प्रसंग के साथ कहना	[illegible]
९०	छेकोक्ति	लोकोक्ति साभिप्राय हो	[illegible]
९१	वक्रोक्ति	श्लेष से दूसरा अर्थ निकले	[illegible]
९२	स्वभावोक्ति	(१) स्वभाव कथन	[illegible] माई, [illegible]
		(२) प्रतिज्ञावत कथन	[illegible]
९३	भाविक	भूत भविष्य का प्रत्यक्षवत् कहना	[illegible]
९४	उदात्त	अतिशय समृद्धि का वर्णन	[illegible]
९५	अत्युक्ति	दान सुजस बल आदि का अतिशय कथन	[illegible]
९६	निरुक्ति	नाम से दूसरा अर्थ की कल्पना	[illegible]
९७	प्रतिषेध	प्रसिद्ध बात का निषेध	[illegible]

संख्या	नाम	संक्षिप्त लक्षण	उदाहरण
९८	विधि	सिद्ध वस्तु का विधि पूर्वक विधान	कोकिल है कोकिल जबै, ऋतु मे करिहै टेर
९९	हेतु	(१) कारण कार्य संग ही कथन हो	अरुण उदय अवलोकहु ताता, पंकज कोक लोक सुखदाता
		(२) कारण कार्य्य की एकता	कोऊ कोटिक संग्रहौ, कोऊ लाख हजार, मो सम्पति यदुपति सदा, विपति विदारण हार ॥
१००	प्रमाण	वेद शास्त्र युक्त कथन	सत्य बचन मत्र ते भलो, बुरो कहत नहि कोय



शुभम्भूयात्

